खण्ड

3

भारतीय-अरबी और भारतीय-फ़ारसी अनुवाद

इकाई 7
भारतीय ग्रन्थों के अरबी अनुवाद 103

इकाई 8
भारतीय ग्रन्थों के फ़ारसी अनुवाद 113

इकाई 9
अरबी ग्रन्थों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद 120

इकाई 10
फ़ारसी ग्रन्थों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद 127

खण्ड-3 का परिचय

हिन्दुस्तान के साथ अरब का प्राचीन सरोकार है। सौदागर के रूप में यहाँ आए अरब के लोगों का हिन्दुस्तानियों के साथ मेल-मिलाप बढ़ा, यहाँ की सभ्यता, संस्कृति और जीवन शैली की जानकारी हुई। व्यापार के दौरान धारणाओं के आदान-प्रदान में भारतीय भाषाओं के ढेरो शब्द अरब पहुँच गए और अनेक अरबी शब्द भारतीय भाषाओं में शामिल हो गए। भारत की जनपदीय धारणाओं के अरबी अनुवाद की परम्परा उतनी ही पुरानी है, जितनी इन दोनों का व्यापारिक सम्बन्ध। अब्बासी युग में आकर इस कार्य में गतिकता आई। अलमन्सूर के आमन्त्रण पर कनकाह नाम के भारतीय विद्वान उज्जैन (भारत) से बगदाद पहुँचे और सन् 628 में ब्रह्मगुप्त द्वारा लिखी गई प्रसिद्ध कृति *ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त* के सहारे गणितीय ज्योतिष की हिन्दू पद्धति की व्याख्या उन्हें बताई। व्याख्या सुनकर इन पुस्तकों के अरबी में अनुवाद करवाने की अलमन्सूर की इच्छा बलवती हो उठी। उन्होंने मुहम्मद अल-फजरी से इसके अरबी में अनुवाद का आग्रह किया। मुहम्मद अल-फजरी ने उनका अरबी में अनुवाद किया।

भारतीय आयुर्वेद की तथ्यपरकता और वस्तुनिष्ठता, भारतीय औषधियाँ, चिकित्सा पद्धति भी अरबों को बहुत आकर्षित थीं। चरक संहिता अथवा सुश्रुत संहिता जैसी पुस्तकों का अरबी में अनुवाद भी हुआ। मानक नाम के एक प्रसिद्ध व्यक्ति भारतीय विज्ञान और भाषा के साथ-साथ फ़ारसी के पर्याप्त ज्ञान के कारण बगदाद के शाही अस्पताल के प्रमुख नियुक्त हुए। उन्होंने अनेक भारतीय पुस्तकों का अरबी में अनुवाद किया। भारतीय वैद्य धन्वन्तरी को यहया बिन खालिद ने अनुवाद के उद्देश्य से बगदाद बुलाया था, उन्होंने कई भारतीय पुस्तकों का अरबी में अनुवाद किया। नौवीं-दसवीं सदी में स्पेन के अरबों (मूरों) ने भारतीय अंक-पद्धति का यूरोप में प्रचार-प्रसार किया। उस समय तक अनेक भारतीय एवं यूनानी ग्रन्थों के अरबी भाषा में अनुवाद हो चुके थे। इन्हीं अरबी ग्रन्थों से यूरोप के विद्वानों को पहली बार भारतीय अंक-पद्धति एवं गणित की अनेक विधियों के बारे में जानकारी मिली। आठवीं से ग्यारहवीं सदी तक के अनेक अरबी गणितज्ञों ने भी भारतीय अंक-पद्धति की मुक्त कण्ठ से स्तुति की।

महमूद गजनवी के समकालीन अलबिरूनी ने *बृहतसंहिता* का अरबी अनुवाद किया। बाद में इसका फ़ारसी अनुवाद अजीज शम्स बहा ए नूरी ने किया। सुलतान जायनुल अबादीन ने कई संस्कृत ग्रन्थों का अनुवाद करवाया। सुलतान सिकन्दर लोदी ने भी फ़ारसी को समृद्ध करने की दृष्टि से कई भारतीय ग्रन्थों का अनुवाद करवाया। शहंशाह अकबर ने प्रसिद्ध संस्कृत ग्रन्थों के अरबी तथा फ़ारसी में अनुवाद करवाने हेतु अलग विभाग कायम किया। उनके पोते दाराशिकोह ने तो बावन उपनिषदों का ही फ़ारसी अनुवाद करवा दिया। *रामायण, महाभारत, अथर्वेद, भगवतगीता* जैसे सुप्रसिद्ध धार्मिक ग्रन्थों का फ़ारसी अनुवाद मुगल शासन में ही हुआ।

अरबों के बीच सर्वाधिक लोकप्रिय कृति *पंचतन्त्र* का अनुवाद संस्कृत से पहलवी, फिर फ़ारसी, और फिर अरबी लेखक इब्न मुकफा ने आठवीं सदी में फ़ारसी से अरबी अनुवाद किया। विक्रमदित्य के काल में लिखी गई किताब *'सिंहासन बतीसी'* का अनुवाद फ़ारसी भाषा में हुआ, इस किताब के बत्तीस अध्याय सिंहासन के सुव्यवस्थित संचालन एवं सुघर प्रशासन पर आधारित हैं। आयुर्वेद की ढेर सारी किताबों का अनुवाद संस्कृत से फ़ारसी में हुआ। योग विद्या पर लिखित कई किताबों का अनुवाद संस्कृत से फ़ारसी में हुआ। योग-साधना की प्रसिद्ध संस्कृत कृति *योगवशिष्ठ* का फ़ारसी अनुवाद *अतवार दर हाल-ए-असरार* शीर्षक से हुआ है। संस्कृत के महान ग्रन्थों में से एक ग्रन्थ कलहन की *राजतरंगिणी* का फ़ारसी अनुवाद मौलाना शास मुहम्मद ने किया। अर्थात अनुवाद के जरिए अरबी फारसी भाषियों का भारत के साथ गहन सांस्कृतिक परिचय कायम हुआ।

अनुवाद का इतिहास एवं परम्परा विषय पर अध्ययन करते हुए *भारतीय-अरबी और भारतीय-फारसी अनुवाद* शीर्षक इस खण्ड में *भारतीय ग्रन्थों का अरबी अनुवाद, भारतीय ग्रन्थों का फारसी अनुवाद, अरबी ग्रन्थों का भारतीय भाषाओं में अनुवाद,* और *फारसी ग्रन्थों का भारतीय भाषाओं में अनुवाद* नाम से चार इकाइयाँ हैं। इन चारो इकाइयों में भारतीय ग्रन्थों के अरबी और फारसी में अनुवाद तथा अरबी और फारसी ग्रन्थों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद के उक्त सभी आयामों पर सारगर्भित विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

इकाई 7 भारतीय ग्रन्थों के अरबी अनुवाद

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 हिन्दुस्तानी पाठ के अरबी अनुवाद की परम्परा

7.3 हिन्दुस्तानी पाठ के अरबी अनुवाद के उद्भव सूत्र

7.4 संस्कृत से अरबी अनुवाद केन्द्र

7.5 खलीफा मामुन रशीद का युग और अनुवाद की परम्परा

7.6 पंचतन्त्र का अरबी में अनुवाद

7.7 सारांश

7.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

7.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

7.0 उद्देश्य

यह इकाई भारतीय ग्रन्थों के अरबी अनुवाद से सम्बन्धित है। इस इकाई को पढ़ने से अनुवाद अध्ययन में एम. ए. करने वाले शिक्षार्थियों को भारतीय ग्रन्थों के अरबी अनुवाद की संक्षिप्त जानकारी मिलेगी। प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- भारतीय भाषाओं से अरबी में हुए अनुवाद की परम्परा को समझ सकेंगे;
- पंचतन्त्र के अरबी अनुवाद का इतिहास जान सकेंगे; और
- भारतीय पाठों के अरबी में हुए अनुवाद के महत्त्व को समझ सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना

अरबी भाषा में भारतीय किताबों के अनुवाद का प्रचलन प्राचीन युग से है, लेकिन अब्बासी खलीफा मामुन रशीद के जमाने में चलन बढ़ गया। मामुन ने बैतुल हिक्मा (House of wisdom) स्थापित किया और अनेक प्रसिद्ध भारतीय किताबों का अरबी में अनुवाद कराया। इस प्रकार अनुवाद के क्षेत्र में कुछ ऐसे बड़े काम हुए जिनसे विश्व स्तर पर मौजूदा पीढ़ी के लोग निरन्तर लाभ उठा रहे हैं।

7.2 हिन्दुस्तानी पाठ के अरबी अनुवाद की परम्परा

हिन्दुस्तान में अरब के लोग सबसे पहले सौदागर के रूप में मालावार समुद्री तट पर आए थे। यहाँ आने के बाद भारतीय लोगों से उनका मेल-मिलाप बढ़ा। उनकी सभ्यता एवं संस्कृति से वाकिफ हुए। भारतीयों को भी अरबों की जीवन शैली के बारे में जानकारी हुई। व्यापार के दौरान धारणाओं के आदान-प्रदान में बहुत से भारतीय भाषाओं के शब्द अरब देशों में पहुँच गए; और अनेक अरबी शब्द भारतीय भाषाओं में शामिल हो गए। खास तौर से मसालों और प्रतिदिन उपयोग की चीजों के नाम से लोग शीघ्र ही वाकिफ हो गए। ऐसा लगता है कि अरबी में नारजील और लैमून भारतीय मूल के हैं। इसी प्रकार तूफान, जिन्नात, अलजेबरा आदि अरबी मूल के शब्द हैं। नारजील अथवा नारियल, लैमून अथवा लेमूँ अथवा नींबू। अरबी शब्द नरजिस और सन्दल भी संस्कृत मूल के शब्द हैं जो अरबी में प्रचलित हुए।

जगत विदित है कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और कूटनीतिक सम्बन्ध का मुख्य आधार अनुवाद है। अनुवाद के बिना दो भाषाओं, दो संस्कृतियों, और दो राष्ट्रों के बीच न तो विचार का विनिमय हो सकता है न वस्तु का। इसलिए भारत की जनपदीय धारणाओं की अरबी भाषा में अनुवाद की परम्परा उतनी ही पुरानी है, जितनी इन दोनों का व्यापारिक सम्बन्ध। अनुवाद की यह परम्परा लगातार बनी रही। अब्बासी युग में आकर इस कार्य में गतिकता आई।

अब्बासी युग के राजा अलमन्सूर अनुवाद के कार्य में काफी रुचि लेते थे। उनका कार्यकाल सन् 712 से 775 का है। उन्होंने दजला नदी के किनारे बगदाद की स्थापना की, और इसे शिक्षा का केन्द्र बनाकर बौद्धिक परम्परा की नींव रखी। उन्होंने पर्याप्त उदारता और तल्लीनता से विश्व के कई क्षेत्रों से विद्वानों को अपने योगदान हेतु आमन्त्रित किया। *सिन्हा* के विद्वानों को खास तौर पर न्यौता दिया गया। *सिन्हा* एक संस्कृतनिष्ठ शब्द है, जिसका उपयोग उन दिनों श्रीलंका और भारत के उपमहाद्वीप के लिए किया जाता था। इस आमन्त्रण पर अब्बासी राजा अलमन्सूर के दरबार में कई ज्ञानी पहुँचे। सन् 770 में खलीफा अलमन्सूर ने उज्जैन (भारत) से कनकाह नाम के भारतीय विद्वान को खास तौर पर आमन्त्रित किया। वहाँ पहुँचकर कनकाह ने खलीफा को गणित एवं ज्योतिष पर केन्द्रित सन् 628 में ब्रह्मगुप्त द्वारा लिखी गई प्रसिद्ध कृति *ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त* के सहारे गणितीय ज्योतिष की हिन्दू पद्धति की व्याख्या बताई, यह कृति सैद्धान्तिक है। सन् 665 में लिखी उनकी दूसरी कृति *खण्डाखड्यका* इस विषय के व्यावहारिक पक्ष पर है। व्याख्या सुनकर खलीफा अलमन्सूर चकित हो उठे, इन पुस्तकों के अरबी में अनुवाद करवाने की उनकी इच्छा बलवती हो उठी। उन्होंने मुहम्मद अल-फजरी से इसके अरबी में अनुवाद का आग्रह किया। मुहम्मद अल-फजरी ने उनका अरबी में अनुवाद किया। खलीफा प्रसन्न हो उठे। ध्यातव्य है कि प्रसिद्ध भारतीय गणितज्ञ एवं ज्योतिषविद् ब्रह्मगुप्त (सन् 597- 668) का जन्म राजस्थान के जालोर जिले के भीनमाल कस्बे में हुआ। उल्लेख असंगत न होगा कि संस्कृत के महान कवि माघ का जन्म भी वहीं हुआ।

भारतीय आयुर्वेद की तथ्यपरकता और वस्तुनिष्ठता, भारतीय औषधियाँ, चिकित्सा पद्धति भी अरबों को बहुत आकर्षित थीं। इन सब में उनकी गहरी रुचि थी। इस आकर्षण और रुचिशीलता के कारण न केवल बहुत-से संस्कृत शब्द अरबी भाषा में आ गए, बल्कि चरकसंहिता अथवा सुश्रुतसंहिता जैसी पुस्तकों का अरबी में अनुवाद कराया गया।

उस युग में मानक नाम का एक प्रसिद्ध व्यक्ति भारतीय विज्ञान की काफी जानकारी रखता था। साथ-साथ उसे फ़ारसी सहित कई भारतीय भाषाओं का ज्ञान भी था। यही कारण है कि उसे बगदाद के शाही अस्पताल का प्रमुख (Chief) बना दिया गया। वहाँ पहुँच कर उसने अनेक पुस्तकों का भारतीय भाषाओं से अरबी में अनुवाद किया।

इसी प्रकार इब्ने दहन (धन्वन्तरी) एक और भारतीय वैद्य थे जो बगदाद में रहते थे। यहया बिन खालिद ने उन्हें अनुवाद के उद्देश्य से वहाँ बुलाया था, उन्होंने कई भारतीय पुस्तकों का अरबी में अनुवाद किया।

आयुर्वेद की पद्धति में जिन लोगों ने अरबों को भारतीय ज्ञान से अवगत कराया उनमें से एक नाम साले बिन बहला का है। यह उनका अरबी नाम है। ये भारत के महान वैद्य थे, जो अरब चले गए थे। कहा जाता है कि एक बार राजा के बहुत ही करीबी व्यक्ति को दरबारी वैद्यों ने मुर्दा घोषित कर दिया था। उनका कफन तक हो गया, उन्हें दफनाने के लिए लोग कब्रिस्तान ले ही जाने को तैयार थे, कि ऐन मौके पर वहाँ भारतीय मूल के वे वैद्य पहुँच गए। उन्होंने लाश को लोगों के कन्धों से उतरवाया और कुछ जड़ी बूटियाँ कूट कर उनकी नाक में डाली और नलकी लगाकर जोर से फूँका। दवा का असर ऐसा हुआ कि मुर्दा घोषित वह व्यक्ति उठकर बैठ गया। लोग आश्चर्य चकित हो गए। इस तथ्य से भारतीय वैद्यिकी परम्परा से लोग वहाँ काफी प्रभावित हुए। ज्ञान के प्रति इस आकर्षण ने अरबों को भारतीय पुस्तकों के अनुवाद की ओर अनुरक्त किया, भारतीय पुस्तकों के अनुवाद की माँग बढ़ गई।

गौरतलब है कि पश्चिमी जगत में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अनुवाद *सप्तुआजिन्त* (Septuagint) ग्रन्थ का है, जो यहूदियों के आर्षग्रन्थ का ग्रीक भाषा में अनुवाद है। सिकन्दर के समय में यूनान और भारत का सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थापित होने से (ई.पू. 327) अनेक भारतीय ग्रन्थों एवं विज्ञानों का ग्रीक भाषा में अनुवाद हुआ। भारतीय गणित का *'शून्य'* उन्हीं दिनों यूरोप में लोकप्रिय हुआ। उससे भी पहले बौद्ध साहित्य का पालि में प्रणयन होने से संस्कृत पालि में परस्पर अनुवाद का कार्य शुरू हुआ। बौद्धों के प्रभाव एवं प्रयास से अनेक भारतीय ग्रन्थों के अनुवाद

चीनी, तिब्बती भाषाओं में हुआ। इसी तरह अरबों के सिन्ध आगमन से गणित और आयुर्वेद के कतिपय अंशों का अरबी भाषा में अनुवाद हुआ। जब अरबों ने यूरोप विजय की तो अरबी से पोर्चुगीज, इतालवी, लैटिन, ग्रीक आदि में अनेक लिखित साहित्य की उपयोगी बातों का अनुवाद कार्य शुरू हुआ, जो आगे चलकर तीव्रता से विकसित हुआ। मध्यकाल में जब सामन्तों और शासकों ने पाण्डुलिपियों की खरीद शुरू की तो अनुवाद-कार्य को प्रोत्साहन मिला।

ईसा की नौवीं-दसवीं सदी में सबसे पहले स्पेन के अरबों (मूरों) ने भारतीय अंक-पद्धति का यूरोप में प्रचार-प्रसार किया था। उस समय तक अनेक भारतीय एवं यूनानी ग्रन्थों के अरबी भाषा में अनुवाद हो चुके थे। इन्हीं अरबी ग्रन्थों से यूरोप के विद्वानों को पहली बार भारतीय अंक-पद्धति एवं गणित की अनेक विधियों के बारे में जानकारी मिली थी। आठवीं से ग्यारहवीं सदी तक के अनेक अरबी गणितज्ञों ने भी भारतीय अंक-पद्धति की मुक्त कण्ठ से स्तुति की है। यूरोप के बौद्धिक जागरण में अरबों के योगदान की चर्चा करते हुए गणित के इतिहासकार अल्फ्रेड हूपर बताते हैं कि स्पेन में भारत की सर्वथा नई और क्रान्तिकारी अंक-पद्धति का प्रचार सर्वप्रथम अरबों ने ही किया। आधुनिक विज्ञान एवं इंजीनियरी का पथ प्रशस्त इसी अंक-पद्धति ने किया है (गुणाकर मुळे/*भारतीय अंक-पद्धति की कहानी*/पृ. 16)।

तथ्य है कि प्राचीन काल से ही विदेशी राजदूत और पर्यटक भारत में आते रहे हैं। उन्होंने वापस जाकर भारत के ज्ञान, अध्यात्मिक धरोहर, कला-संस्कृति तथा समृद्धि के विषय में जो आलेख और वृतान्त अपने-अपने देशवासियों को दिए, उससे पूरे विश्व में भारत के धर्म, दर्शन, कला-संस्कृति, जीवन और चिन्तन पद्धति को जानने और खुद को ज्ञान-सम्पन्न करने की उत्सुकता जगी। यूरोपीय देशों में रेनेसाँ (Renaissance) के दौर में भारत खोजने की जैसी होड़ मची थी, उसका एक कारण सम्भवतः यह भी रहा हो! भारत के कपड़े, स्वर्ण, रत्न, इत्र आदि सुगन्धित पदार्थों तथा गर्म मसालों की प्रसिद्धि से फ्रांस, डच, डैन तथा इंग्लैण्डवासी पहले ही प्रभावित हो चुके थे। वात्स्यायन की प्रसिद्ध कृति 'कामसूत्र' यूरोपवासियों के बीच काफी लोकप्रिय हो चुकी थी। इंग्लैण्ड, फ्रांस, हालैण्ड, स्पेन तथा पुर्तगाल के नाविक भारत पहुँचने को उत्सुक हो उठे थे।

सचाई है कि भारत के बहुचर्चित ग्रन्थ *'पंचतन्त्र'* का पश्चिमी एशिया तथा यूरोप के देशों में सर्वाधिक पठन-पाठन हुआ है। *उपनिषद्, भगवद्गीता* या *अभिज्ञानशाकुन्तलम्* नाटक का नाम सुनने के सदियों पहले यूरोप के लोग *पंचतन्त्र* की कहानियों पर फिदा हो चुके थे। डॉ. विण्टरनिट्ज के अनुसार साहित्य के क्षेत्र में भारतीय कथा-साहित्य तो संसार के लिए सबसे बड़ी देन है ही, गुणाकर मुळे के अनुसार विज्ञान के क्षेत्र में भारतीय अंक-पद्धति और अंक-संकेत भी संसार के लिए सबसे बड़ी देन है (*भारतीय अंक-पद्धति की कहानी*/पृ. 13-14)। ध्यान देने की बात है कि ये सारी ही स्थितियाँ अनुवाद और मात्र अनुवाद के कारण फलीभूत हुईं।

तथ्य है कि सिलसिलेवार आक्रमणों और बर्बरतापूर्ण बर्बादियों के दौर से गुजरते हुए भारतीय साहित्य की ढेरों सम्पदा नष्ट हो गई होती यदि गणित, विज्ञान, खगोलशास्त्र, चिकित्सा तथा दर्शन के ग्रन्थ तक्षशिला, नालन्दा, ओदान्तपुरी, विक्रमशिला आदि विश्वविद्यालयों में अरबी भाषा में अनूदित न हो गए होते।

उस दौर में धार्मिक और अध्यात्मिक ग्रन्थों की मूल प्रतियाँ कई स्थलों पर कुछ हितैषियों के छिपा देने के कारण बच गईं, बाद के समय में उन्हीं में से कुछ का अरबी और फ़ारसी में अनुवाद अरब देशों में हुआ, फिर वह अनुवाद के सहारे यूरोप भी पहुँचीं।

कुछ सूफी दार्शनिक भारतीय ज्ञान-विज्ञान तथा ललित कलाओं से प्रभावित हुए, उन्होंने उस ज्ञान का क्रियात्मक इस्तेमाल किया।

भारत के ज्ञान-विज्ञान को कई मुस्लिम बुद्धिजीवियों और शासकों ने संरक्षण दिया, उसमें योग्दान दिया। हिन्दी साहित्य, कला तथा संगीत के क्षेत्र में अमीर खुसरो, मलिक मुहम्मद जायसी, रहीम, रसखान, तानसेन, दाराशिकोह, मसीतखान और रजाखान के नाम श्रद्धा से लिए जा सकते हैं।

महमूद गजनवी के समकालीन अलबिरूनी ने सबसे पहले *'बृहतसंहिता'* का अरबी भाषा में अनुवाद किया। बाद में इसी भारतीय ग्रन्थ का फ़ारसी अनुवाद अजीज शम्स बहा ए नूरी ने किया।

सन् 1362 में सुलतान फिरोज शाह तुगलक ने नगरकोट पर आक्रमण किया। वहाँ उसे ज्वालामुखी मन्दिर से 1300 प्राचीन ग्रन्थ मिले। अधिकांश ग्रन्थ तो नष्ट कर दिए गए, पर उन में से कुछ ग्रन्थों को फ़ारसी में अनुवाद कराया गया। इज्जुद्दीन खालिद खानी ने भौतिक विज्ञान तथा खगोल विज्ञान के ग्रन्थों का अनुवाद *'दालाएल फिरोजशाही'* तथा *'अब्दुल'* के नाम से किया।

सुलतान जायनुल अबादीन ने कई संस्कृत ग्रन्थों का अनुवाद करवाया। इसके अतिरिक्त सुलतान सिकन्दर लोदी ने भी कई ग्रन्थों का अनुवाद फ़ारसी को समृद्ध करने की दृष्टि से करवाया।

गिने चुने संस्कृत ग्रन्थों का अरबी तथा फ़ारसी अनुवाद करवाने हेतु मुगल शहंशाह अकबर ने 'मकतबखाना' नाम से एक विभाग कायम किया था। अकबर के उत्तराधिकारी जहाँगीर के काल में भी वैसा होता रहा। बाद में उनके पोते दाराशिकोह ने उपनिषदों का अनुवाद फ़ारसी में करवाया।

अन्तकुवेतिल दुपरोन ने अरबी फ़ारसी में अनूदित संस्कृत ग्रन्थों का फ्रैंच तथा लैटिन भाषा में अनुवाद किया जो यूरोप में भारतीय साहित्य को लोकप्रिय बनाने के निमित बने। जर्मन विद्वान स्कोपन्हार भी इन्हीं से प्रभावित हुए थे।

आठवीं शताब्दी में मध्य एशिया क्षेत्र अरबों के राजनीतिक प्रभाव में आ चुका था और उनका शासन क्षेत्र सिन्धु से स्पेन तक फैल गया था। भारतीय ज्ञान का प्रभाव बगदाद तक फैल तो चुका था, किन्तु उस क्षेत्र की सत्ता अरबों के हाथ में थी, जो इस्लाम कबूल कर चुके थे। समस्त अब्बासी सलतनत में अरबी भाषा के मदरसे खुल चुके थे। भारत से जो भी ज्ञान तब तक वहाँ पहुँचा था उसे अरबी भाषा में अनुवाद के जरिए ही व्यवहार में लाया जा रहा था। भारतीय ज्ञान का प्रसार वहाँ जैसे-जैसे बढ़ा, उसकी पहचान बदलती गई।

7.3 हिन्दुस्तानी पाठ के अरबी अनुवाद के उद्भव सूत्र

इतिहासकारों के अनुसार जब यूरोप में 'अन्धकार-युग' चल रहा था, रेनेसाँ का दौर शुरू नहीं हुआ था, तब भारत में तुगलक वंश का शासन था। सचाई है कि आरम्भ में भारतीय ज्ञान को अपनाने में यूरोपवासी बड़े उदासीन थे। अधिकतर ग्रन्थों का अनुवाद भर होता था, ज्ञानार्जन हेतु उसका उपयोग नहीं। वे तो भारत के अंकों तथा दशमलव पद्धति को समझ पाने में भी आरम्भ में विफल रहे थे। सन् 1548-1620 में डच गणितिज्ञ साइमन स्टीवन ने अपनी कृति *'ला-थिण्डे'* के माध्यम से कुछ सफलता प्राप्त की। सन् 1621 में फिर माकिनी तथा क्रिस्टोफर क्लाइड्स ने भारतीय पद्धति को अपनी कृतियों में और सरलता से उजागर किया। सन् 1621 में ही बैकिट ने अरबी भाषा में अनूदित संस्करण को लैटिन भाषा में *'अर्थमैटिका'* शीर्षक से प्रकाशित किया। ईसा के बाद के हजार वर्षों तक भी भारत के बारे में यूरोपवासियों की अज्ञानता का अनुमान इन तथ्यों से लगाया जा सकता है :

- अरब देशों में भारतीय अंकों को *'हिन्दसे'* (अर्थात् भारत से) पुकारा जाता था, इसके बावजूद यूरोपीय देशों के लोग भारतीय अंकों को सन् 976 तक *अरेबिक न्यूमरल्स* (अरबीय अंक) के नाम से पहचानते रहे। सन् 1202 में लियोनार्डो पिसानो ने औपचारिक रूप से यूरोप में *'हिन्दसे'* नाम से प्रसारित किया, और *'हिन्दसे'* पूरे विश्व में अन्तर्राष्ट्रीय अंकों के रूप में प्रचलित हुआ।
- स्पेन के मठ *सेण्टा मेरिया डि रिपौल* में अरबी भाषा के ढेर सारे ग्रन्थों का लैटिन भाषा में अनुवाद हो चुका था। इनमें से अधिकांश ग्रन्थ मूलतः संस्कृत से अरबी भाषा में अनुवाद किए गए थे, किन्तु स्पेनवासियों को मौलिक ग्रन्थों की जानकारी नहीं थी।
- दसवीं शताब्दी में गरबर्ट आरिलैक (सन् 946-1003) ने पोप का पद सँभाला। उन्होंने स्पेन के विद्वानों से भारतीय गिनती का विधान सीखा, और उससे प्रभावित होकर सन् 990 में उन्होंने अपने शिष्यों को भी *हिन्दसे* के माध्यम से गिनती सिखाई।

संस्कृत का 'पितृ' शब्द फ़ारसी में 'पिदर' और अंग्रेजी में 'फादर' बन गया। उसी प्रकार 'मातृ', 'मादर' और 'मदर' बन गया, 'भ्रातृ' 'बिरादर' से 'ब्रदर' बन गया।

आठवीं शताब्दी में मध्य एशिया क्षेत्र अरबों के राजनीतिक प्रभाव में आ चुका था और उनका शासन क्षेत्र सिन्धु से स्पेन तक फैल गया था। भारतीय ज्ञान का प्रभाव बगदाद तक पहुँच चुका था। उस समय तक जो भी ज्ञान-सम्पदा भारत से बगदाद पहुँचा था उसे अरबी भाषा में अनुवाद कर प्रयोग में लाया जा रहा था। इस पद्धति में भारतीय ज्ञान का प्रसार वहाँ ज्यो-ज्यों आगे बढ़ा, उसकी मौलिक पहचान मिटती गई, बदलती गई।

तथ्यानुसार अरबी साहित्य के इतिहास को निम्नलिखित पाँच कोटियों में बाँटकर देखा जाता है—पूर्व-पैगम्बर काल (आरम्भ से सन् 622 तक), पैगम्बर का युग (सन् 622-750), अब्बासी युग (सन् 750-1258), मुसलमानों तथा तुर्कों का शासनकाल (सन् 1258-1798), आधुनिक काल (सन् 1798 से अब तक)। अब्बासी युग को हर दृष्टि से स्वर्णयुग कहा जाता है। इस दौर में अरबी साहित्य में बहुविधि विकास हुआ। खलीफा से लेकर जनसाधारण तक, सभी विद्याओं और कला-कौशल को उन्नत बनाने में तन मन से लगे हुए थे। राजधानी बगदाद के अलावा विशाल इस्लामी राज्य में असंख्य शिक्षा केन्द्र स्थापित किए गए थे; सबमें साहित्य, कला, तथा कौशल की उन्नति के लिए एक भव्य प्रतिस्पर्द्धा थी। इस उपयुक्त वातावरण के फलस्वरूप कविता का उद्यान भी लहलहा उठा। सभ्यता और संस्कृति की उन्नति और अन्य जातियों तथा भाषाओं के मेल से नए-नए विचार और नए-नए शब्द, वाक्य कविताओं में जगह पाने लगे। विचारों में गम्भीरता एवं बारीकी और शब्दों में प्रवाह एवं माधुर्य आने लगा। विभिन्न वर्णन-शैलियाँ विकसित हुईं। विरक्ति, पवित्रता और उपदेश की धाराएँ प्रवाहित हुईं। अबुल अताहिया (मृत्यु सन् 850) का नाम इस दिशा में सबसे पहले आता है। इसी प्रकार अबुल अला अलमअर्रो (मृत्यु सन् 1057) ने मानवता के विभिन्न अंगों पर दार्शनिक ढंग से प्रकाश डाला और इब्नुल फारिज (मृत्यु सन् 1235) ने आध्यात्मिकता के वायुमण्डल में उड़ान भरी। विश्वास करना सहज है कि इन उद्यमों में अनुवाद की बड़ी भूमिका रही होगी।

यहाँ स्पेन की अरबी कविता का उल्लेख मुनासिब होगा। मुसलमानों का राज वहाँ लगभग 800 वर्ष रहा। इस अवधि के कला, साहित्य, संस्कृति के क्षेत्र की उन्नति देखकर शताब्दियों तक यूरोप चकित रहा।

इस दौरान अरबी गद्य में पर्याप्त विकास हुआ। प्रारम्भ में इब्नुल मुकफ्फा (मृत्यु सन् 760) ने दूसरी भाषाओं की कुछ पुस्तकों का अरबी में अनुवाद किया, जिनमें *कलीला व दिमना* (मूल संस्कृत *'पंचतत्र'*) अति प्रसिद्ध है। इसके बाद फिर प्राचीन किस्से-कहानियाँ पुस्तकों में संकलित होने लगीं। मनोरंजक और ज्ञानात्मक शैली में प्रस्तुत तरह-तरह की कहानियों का संग्रह *अलिफ लैला* इन सब में बहुत प्रसिद्ध है।

सन् 1258 से 1798 तक के अन्तराल के इतिहास-लेखन में नई शैली का सूत्रपात हुआ। इब्ने खल्दून (मृत्यु सन् 1406) ने अपने इतिहास की भूमिका में विस्तृत दार्शनिक दृष्टिकोण के साथ ज्ञान सम्बन्धी, राजनीतिक और सामाजिक समस्याओं का सुन्दर वर्णन किया है, जो *'मुकद्दमा इब्ने खल्दून'* के नाम से मशहूर है। उस भूमिका का महत्त्व स्वतन्त्र पुस्तक से भी अधिक है। इन उद्यमों में अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका की उपेक्षा नहीं की जा सकती। अनेक विद्याओं और कलाओं में बराबर दक्षता रखनेवाले इब्ने तैमीयह (मृत्यु सन् 1238), जहबी (मृत्यु सन् 1347), इब्नेहज़र अस्क़लानी (मृत्यु सन् 1449) और जलालुद्दीन सुयूती (मृत्यु सन् 1505) जैसे इस दौर के विद्वानों का स्मरण श्रद्धा से किया जाना चाहिए। उनकी कृतियों में अपार ज्ञान का कोष भरा हुआ है। व्याकरण, *निरुक्त* और साहित्य के विख्यात अन्वेषक इब्रे मंजूर (मृत्यु सन् 1311) की महत्त्वपूर्ण कृति *'लिसानुन अरब'* की गणना श्रेष्ठ शब्दकोश में होती है। जाहिर है कि *निरुक्त* जैसे महान भारतीय ग्रन्थ के अध्ययन-मनन की पद्धति उस दौर के भारतीय ग्रन्थों के अनुवाद से ही विकसित हुई होगी।

सन् 1798 से अब तक के अन्तराल को अरबी साहित्य का आधुनिक काल, अर्थात् पुनर्जागरण काल माना जाता है।

मिस्र पर नेपोलियन के आक्रमण से इस दौर का प्रारम्भ माना जाता है। इस दौर की परिस्थितियों से अरबी साहित्य में नई चेतना जगी। पश्चिमी साहित्य, संस्कृति, ज्ञान, विचारधारा, सभ्यता, दृष्टिकोण आदि से अरब का जनजीवन बहुत प्रभावित हुआ, नई-नई शिक्षा-पद्धति, मुद्रणकला के आविष्कार, पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन से चेतना-विस्तार की पाँखें खुलीं। ज्ञान सम्बन्धी साहित्यिक संस्थाएँ सुस्थापित हुईं। अरब जनजीवन नई-नई प्रवृत्तियों, दृष्टिकोणों से परिचित हुआ। स्वतन्त्रता, देशभक्ति तथा राष्ट्रीयता की भावनाएँ जाग्रत हुईं। राजनीतिक एवं सामाजिक विचारधाराओं में भी परिवर्तन हुआ। अरबी साहित्य में नवजागरण की लहर दौड़ गई।

रचनाओं में जीवन की लालसाएँ दृष्टिगोचर होने लगीं। रचनाकार शाब्दिक चमत्कार के बजाय वर्ण्य-विषय की ओर मुखातिब हो गए। अन्य भाषाओं की रचनाओं के अरबी में पद्यानुवाद होने लगे। उर्दू के गौरवान्वित कवि अल्लामा इक़बाल की कविताओं का भी *'रवाए इक़बाल'* के नाम से अनुवाद हुआ। उल्लेखनीय है कि भारत के महान रचनाकार रवीन्द्रनाथ टैगोर तथा पं. जवाहरलाल नेहरू की कृतियों का अरबी में अनुवाद हुआ।

अनुवाद के माध्यम से अरबी में कहानी, नाटक, उपन्यास आदि नई-नई विधाओं की शुरुआत हुई। समालोचना की ओर भी ध्यान गया।

7.4 संस्कृत से अरबी अनुवाद केन्द्र

नौवीं शताब्दी से ही अरब में संस्कृत से अरबी अनुवाद के कई केन्द्रों के कार्यरत होने की सूचना मिलती है, उनमें से कुछ प्रमुख केन्द्र निम्नलिखित हैं :

- खलीफा अब्दुल रहमान III (सन् 891-961) ने कोरडोबा (स्पेन) में एक बड़ा पुस्तकालय खुलवाया जिसमें बगदाद से लाए गए ग्रन्थों को रखा गया। इस पुस्तकालय में लगभग चार लाख पुस्तकों का संग्रह था।
- सिसली में भी अरबों का शासन था। वहाँ भी बगदाद से लाकर प्राचीन ग्रन्थों का संग्रह स्थानीय पुस्तकालय में किया गया था। संस्कृत से अरबी अनुवाद का क्रम सोहलवीं शताब्दी के अन्त तक निरन्तर चलता रहा।
- स्पेन के अलावा सीरिया, दमास्कस, पालेर्मो में भी अनुवाद केन्द्र थे। इन्हीं स्थलों पर आर्यभट्ट की कृतियों का अनुवाद किया गया था।
- सन् 1120 में एक स्पेनवासी अंग्रेज रॉबर्ट आफ चॉस्टर ने अलख्वारिसमि की कृति *अलगोरित्मी डी न्यूमरो इनडोरम* का लैटिन भाषा में अनुवाद किया। यह कृति आर्यभट्ट के ग्रन्थ पर आधारित थी। इस अनुवाद के परिणामस्वरूप ही भारतीय मूल के अंक, गणित, अंक-गणित तथा खगोल शास्त्र लैटिन में प्रचलित होकर यूरोपवासियों तक पहुँचे, जिसके माध्यम से भिन्न (फ्रैक्शन), द्विघातीय समीकरण (क्वाड्रेटिक इक्वेशन) आदि के ज्ञान का प्रकाश यूरोपीय देशों में हुआ।
- सन् 1224 में फ्रेड्रिक ने नेप्लस में एक विश्वविद्यालय स्थापित किया जिसमें संस्कृत तथा अरबी भाषा के ग्रन्थों का बड़ा संग्रह था। संस्कृत के कई मूल ग्रन्थों की व्याख्या अरबी में भी थी। वहाँ स्पेन से एक अनुवादक बुलाए गए, उन्होंने अरस्तू के जीवविज्ञान सम्बन्धी कृतियों का लैटिन में अनुवाद किया। अनूदित ग्रन्थों की लैटिन प्रतियाँ पेरिस तथा बोल्गना के विश्वविद्यालयों को भी प्रदान की गईं। फ्रेड्रिक ने सन् 1228-1229 में फिलिस्तीन के विरुद्ध पंचम धर्मयुद्ध भी छेड़ा, और येरूसलम, बेथेलहम तथा नजारथ नाम के ईसाई धर्म केन्द्रों को अरबों से पुनः विजय कर लिया। इस विजय के परिणामस्वरूप सुकरात, प्लेटो तथा अरस्तू की कृतियाँ पुनः यूरोप वासियों को प्राप्त हो गईं। उनके साथ भारतीय प्राचीन ग्रन्थों का गणित, खगोल शास्त्र, चिकित्सा, भौतिक शास्त्र, रसायन, दर्शन तथा संगीत से सम्बन्धित विशिष्ट ज्ञान भी यूरोप पहुँच गया।

7.5 खलीफा मामुन रशीद का युग और अनुवाद की परम्परा

अब्बासी खलीफा मामुन ने बैतुल हिक्मा (House of wisdom) बगदाद में स्थापित किया। पूरे विश्व के विज्ञान, साहित्य, और विभिन्न कलाओं में प्रसिद्ध लोगों को वहाँ आने का न्यौता दिया गया। इसमें भारतीय वैज्ञानिक बड़ी संख्या में वहाँ पहुँचे। मामुन ने आदेश दिया कि विभिन्न भाषाओं में मौजूद पुस्तकों का अरबी में अनुवाद किया जाए। उस समय भारतीय पुस्तकों का अरबी अनुवाद बड़ी संख्या में किया गया।

7.6 पंचतन्त्र का अरबी में अनुवाद

भारतीय मूल की जिन किताबों का अरबी अनुवाद हुआ, उनमें *पंचतन्त्र* सर्वाधिक प्रसिद्ध है। इस किताब का अनुवाद पहले संस्कृत से फ़ारसी में किया गया, उसके पश्चात फिर फ़ारसी से अरबी में *इब्न मुकफा* नाम के एक

बहुत बड़े अरबी के साहित्यकार ने आठवीं सदी में अनुवाद किया। अब्बासी युग में जब इस किताब का अनुवाद अरबी में किया गया तो अरब के लोग चकित रह गए। अरबी में इस किताब का नाम *कलीला* व *दिमना* रखा गया। अनुवाद की शैली इतनी रोचक और मनमोहक है कि इसे छोड़ा न जाए।

उस कृति में इस बात का उल्लेख है कि प्राचीन ईरान के राजा खुसरू नौशेरवाँ को जब यह जानकारी मिली कि भारत में किसी राजा के पुस्तकालय में ऐसी किताब मौजूद है जो कि राज-पाट के उसूलों की अच्छी जानकारी देती है, और इस बारे में इतने सरल तरीके से अब तक कोई और किताब नहीं लिखी गई है; तब राजा ने अपने तमाम दरबारियों को बुलाया और उस किताब को किसी भी तरह पाने की इच्छा प्रकट की। राजा के ही आदेशानुसार बरजोया नामक वजीर भारत आने के लिए तैयार हुआ। भारत आकर वह यहाँ के राजा के दरबार में नौकरी करने लगा। धीरे-धीरे उसने पुस्तकालय के मालिक से दोस्ती कर ली। और फिर उस किताब को नकल करने की आज्ञा माँगी। राजा को कानों-कान इस बात की खबर न हुई। वह रात-दिन मेहनत करके उस किताब को संस्कृत से फ़ारसी में नकल करने लगा। कई महीनों में वह काम पूरा हुआ, आखिरकार उसे कामयाबी मिल गई। वह वजीर जब वापस अपने देश पहुँच गया और राजा के सामने हाजिर हुआ तो राजा ने उसको सोने और हीरे से लाद दिया। उसके सम्मान में पूरे शहर में भव्य समारोह का आयोजन किया गया। यह पूरी कहानी अरबी में अनूदित किताब *कलीला व दिमना* में मौजूद है। यहाँ इस कहानी के संक्षिप्त उल्लेख से अनुमान करना आसान है कि पश्चिमी एशियाई देशों में प्रसिद्ध भारतीय किताबों की माँग कितनी अधिक थी।

अब सवाल उठता है कि आखिरकार राजा ने इस भारतीय मूल की किताब उपलब्ध करने की इतनी अधिक कोशिश क्यों की? कारण स्पष्ट है। इस किताब के सहारे राजा को राज-पाट चलाने के तरीके समझने में सहायता मिल सकती थी। आज भी *पंचतन्त्र* का नाम संसार की पाँच सर्वाधिक लोकप्रिय कलाकृतियों में शुमार होता है। हो न हो उन पाँच में भी सबसे ऊपर हो। विदित है कि प्राचीन युग में भारत की गरिमामय पहचान थी। इसे धरती पर हुआ स्वर्ग साबित करने के लिए प्रसिद्ध फ़ारसी कवि खुसरो ने दस कारणों का उल्लेख किया था—जिसमें एक यह है कि इस देश में वह नायाब किताब लिखी गई जिसे *पंचतन्त्र* कहा जाता है। इस किताब का अनुवाद, खुसरो की जानकारी के अनुसार अरबी, फ़ारसी, तुर्की और दरी भाषाओं में हो चुका था। प्राचीन काल में ही इस पुस्तक का विश्व की इतनी भाषाओं में अनुवाद हो जाना इस बात को और ज्यादा प्रमाणित करता है कि यह किताब अत्यन्त महत्त्वपूर्ण थी। और इसी के साथ यह भी पता चलता है कि भारतीय भाषाओं से विश्व की अन्य भाषाओं में अनुवाद की परम्परा प्राचीन युग से ही है। और इसमें भारतीय मूल की किताबों का हिन्दी में अनुवाद भी शामिल है।

इसका तरीका क्या था, यह कैसे सम्भव हुआ—ये सब बताना आसान नहीं है। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इन किताबों का अनुवाद अरबी और अन्य भाषाओं में हुआ, और इस कारण इस अनुवाद की परम्परा की नींव पड़ी। और फिर इसकी होड़ में लेखकगण कहानियों की वैसी रोचक और ज्ञानवर्द्धक पद्धति के विकास में लग गए। जिन्नों और जानवरों को पात्र बनाकर कहानियाँ लिखीं और उनमें *पंचतन्त्र* के मर्म पिरोने की कोशिशें कीं। पर वे सब *पंचतन्त्र* के केवल एक पहलू को समेट कर रह गए। घटनाएँ और पात्र बदलकर इन कहानियों का अनुलेखन करने की इतनी कोशिशें की गईं कि कहानियों के कई रूप सामने आ गए।

यह विश्व की उन रचनाओं में से है जिसका प्रभाव लोकजीवन पर बहुत गहरा पड़ा। प्रबुद्ध वर्ग से लेकर अनपढ़ जनों तक का समान स्नेह इस पद्धति को मिला। *पंचतन्त्र* का बड़ा योगदान यह रहा है कि इस किताब ने न केवल अरबी भाषा को मुहावरों से मालामाल किया अपितु विश्व की अन्य भाषाओं में भी उनके अनुवाद बनते गए। इन मुहावरों का वैश्विक विस्तार आह्लादक है। हिन्दी में प्रयुक्त *मगरमच्छ के आँसू, बेकार पचड़े में पड़ना, नकली शेर, ढोल की पोल, बगुला भगत, गधे का अलाप, सोए शेर को जगाना, पढ़े लिखे मूर्ख, नादान दोस्त से ज्ञानी दुश्मन भला* आदि मुहावरे प्रचलन में आए और अन्य भाषाओं में अनुवाद की परम्परा के कारण फैल गए।

पंचतन्त्र की कहानियाँ और उनमें पाए जाने वाले उपदेशों को देखकर प्रतीत होता है कि यह किसी पण्डित द्वारा केवल उस दौर के लिए ही लिखी गई कहानियाँ नहीं हैं। इनकी बहुत लम्बी परम्परा है।

समकालीन जनजीवन को कथाओं में पिरोने की परम्परा प्राचीन समाज में रही है। इसके सबूत भारत, चीन, यूनान, अफ्रीका, लातिन अमेरिका आदि में प्रचलित लोक कथाओं में मिलते हैं, पर *पंचतन्त्र* अकेली ऐसी रचना है जिसे अगर दुनिया का सबसे पुराना ज्ञानकोश कहा जाए तो बेजा न होगा। इसे इसी रूप में दुनिया ने जाना भी और सराहा भी। जिन देशों से भारत का कुछ खास लगाव न था वहाँ भी इसकी धूम मच गई। जिन भाषाओं का लिखित साहित्य नहीं था, उनमें भी इसका प्रवेश लोक परम्परा द्वारा हो गया। यही कारण है कि इस किताब को हर युग में संसार के लोगों ने गले लगाया। इसका अनुवाद करने वालों ने इसे ज्ञान की किताब कह कर अपनाया और विश्व की अन्य भाषाओं में अनुवाद किया। यूनानी, लैटिन, इतालवी, स्पेनिश, जर्मन, अंग्रेजी आदि अनेक भाषाओं में तो इसका अनुवाद सन् 1600 के पहले ही हो चुका था।

पंचतन्त्र की जिन कहानियों का अरबी भाषा में अनुवाद किया गया, उनको देखकर ऐसा लगता है कि ये कहानियाँ मूल रूप से भारतीय हैं। यह और बात है कि अरबों ने न केवल इसका अनुवाद किया, अपितु उसे अपने रूप में ढालने की भी कोशिश की। इसीलिए हम जब *पंचतन्त्र* को अरबी में पढ़ते हैं तो इसका स्वरूप कुछ बदला-बदला-सा पाते हैं। मानो अरबों ने इसे अलग लिबास पहनाया हो। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि अरबों के अनुवाद से पहले ही फ़ारसी में इसका अनुवाद हो चुका था।

पहले ही कहा जा चुका कि *पंचतन्त्र* का नाम अरबी में *कलीला व दिमना* रखा गया। इस किताब की पहली ही कहानी का शीर्षक अरबी में *कलीला व दिमना* है। इस कारण किताब का शीर्षक *कलीला व दिमना* रख दिया गया। इस बात से भी अरबी में इस कहानी का महत्त्व उद्घाटित होता है। कहानी में *कलीला व दिमना* नाम के दो सियार हैं, जो राजा बाघ की छत्रछाया में जीते हैं। इसी बीच शतुरबा नाम का एक बैल कहीं से अचानक जंगल में आ गया। राजा को बैल की संगत अच्छी लग गई, उसने उसे अपना करीबी बना लिया। दिमना के पेट में यह बात हजम नहीं हुई। वह उस बैल से चिढ़ने लगा। उसे लगा कि राजा उसे छोड़ कर उस बैल को ज्यादा करीबी समझने लगा है। अब दिमना रात-दिन उस बैल की जान लेने के उपाय सोचने लगा। एक बार कुछ ऐसा हुआ कि राजा को कोई शिकार नहीं मिला, कई दिनों तक वह भूखा रह गया। दिमना ने षड्यन्त्र रचा। राजा को कमजोर पाकर उसका मनोबल और बढ़ गया। वह राजा से बोला—यह बैल तो आपका राज-पाट छीनने की साजिश कर रहा है!—फिर आगे बोला—इस बार जब आप उससे मिलेंगे तो वह बिल्कुल हमला करने के मूड में होगा। थोड़ा डरा हुआ भी होगा।—फिर दिमना सियार बैल के पास जाकर बोला—राजा तुम्हें जान से मारने की सोच रहा है। इस बार तुम उससे मिलोगे तो वह तुम पर हमला करने के लिए तैयार होगा।—आखिरकार जब बाघ बैल से मिला तो सचमुच वह डरा हुआ दिख रहा था, अपना सींग उठाए हुए था। इधर बैल ने देखा कि बाघ के तेवर चढ़े हैं और वह हमला करना चाहता है। इस तरह दोनों को दिमना सियार की बात सच प्रतीत हुई। दोनों लड़ पड़े, बगैर सोचे समझे बाघ ने बैल को जान से मार दिया। दिमना सियार ने साजिश रचकर, मक्कारी से बैल को मरवा दिया।

यह और इस तरह की अन्य कहानियाँ जो मूल रूप से *पंचतन्त्र* की हैं, अरबी में अनुवाद की गईं। लेकिन उन कहानियों के अनुवाद करनेवालों ने अपनी तरफ से भी बहुत कुछ जोड़ा। और अब ये कहानियाँ अरबी साहित्य में काफी ऊँचे मुकाम पर रखी जाती हैं।

आज विश्व के कोने-कोने में जहाँ भी अरबी पढ़ाई जाती है, पाठ्यक्रम में *कलीला व दिमना (पंचतन्त्र)* अवश्य शामिल नजर आती है।

इसी प्रकार एक और महत्त्वपूर्ण किताब जिसने न केवल अरब दुनिया में अपितु पूरे संसार में हलचल मचा दी वह *अलिफ लैला व लैला (हजार रातें और एक रात)* है। इस किताब का अरबी से लगभग विश्व की सभी महत्त्वपूर्ण भाषाओं में अनुवाद हुआ। परन्तु अब यह बात पूर्ण रूप से साबित हो रही है कि बहुत-सी कहानियाँ, जैसे *अलादीन का चिराग* और *अलीबाबा चालिस चोर* वगैरह कहानियाँ भारतीय मूल की हैं। यहाँ से इनका अनुवाद अरबी में हुआ और फिर वहाँ से विश्व की अनेक भाषाओं में उसका अनुवाद हुआ। गम्भीरता से देखने पर मालूम होता है कि अरबों की बहुत-सी प्रसिद्ध किताबें मूल रूप से भारतीय हैं, उनका अरबी में अनुवाद कर अरबों ने उसे यूरोप के लोगों में प्रचारित किया। और यह भारतीय भाषाओं से अरबी में अनुवाद की परम्परा ही थी जिसके कारण यह सब सम्भव हो सका।

अरबों ने गणित के क्षेत्र में भारतीयों से अत्यधिक लाभ उठाया। भारतीय किताबों का अरबी में अनुवाद किया, बल्कि कहना असंगत न होगा कि अरबों में अनुवाद के माध्यम से कई महत्त्वपूर्ण पुस्तकों का अरबी में अनुवाद कर अपने यहाँ गणित की नींव रखी। इसका सबसे बड़ा सबूत इस बात से मिलता है कि अरबों ने गणित का नाम *इलमुल हिनदिसा* रखा। अरबी में यह शब्द *'हिन्द'* से बना है, जिसे हम भारत कहते हैं। इसी तरह अरबी में हिसाब के जानकार या फिर इंजीनियर को *'मुहनदिस'* कहा जाता है यह भी *'हिन्द'* से बना है।

प्राचीन भारत में 'जीरो' के लिए जो शब्द प्रचलित थे उनमें 'शून्यांक' तथा 'बिन्दु' प्रसिद्ध हैं। अरबी में 'जीरो' को 'सिफर' कहा जाता है, जो संस्कृत शब्द 'शून्य' से काफी मिलता है, फिर यही शब्द अंग्रेजी में 'सिइफर' नाम से प्रचलित हुआ। साफ पता चलता है कि अरबों ने गणित में भारतीय ज्ञान से काफी लाभ उठाया और निश्चित रूप से यह सब अनुवाद द्वारा सम्भव हो सका। अगर भारतीय पुस्तकों का अनुवाद अरबी में न हुआ होता तो अरबों का दामन इस प्रकार के महत्त्वपूर्ण विषयों से खाली रहता और फिर बाद में अंग्रेज भी शायद इस क्षेत्र में बहुत अधिक सफलता न प्राप्त कर पाते।

भारतीय ज्ञान से आकर्षित हो कर ही अलबिरूनी ने भारत दर्शन की ठानी और इस देश की खोज के लिए निकल पड़ा। उसने पूरे देश का भ्रमण किया। यहाँ के धर्मों, रीति-रिवाजों को परखा और फिर *'किताबुल हिन्द'* के नाम से एक पुस्तक लिखी जो इस विषय पर महत्त्वपूर्ण किताब मानी जाती है। अलबिरूनी ने संस्कृत सीखी और *'शाक्य'* एवं *'पातंजल'* का अरबी में अनुवाद भी किया। इस बात का उल्लेख अलबिरूनी ने *'किताबुल हिन्द'* के आखिर में किया है। अलबिरूनी को फ़ारसी, अरबी, संस्कृत और यूनानी भाषाओं का गम्भीर ज्ञान था। इसीलिए उन्हें भारत में विद्यासागर कहा जाता था। उन्हें इबरानी और सीरियाई भाषाओं का भी ज्ञान था।

महमूद गजनवी के समकालीन अलबिरूनी ने ही सर्वप्रथम *'बृहतसंहिता'* का अरबी भाषा में अनुवाद किया। फिर इसी भारतीय ग्रन्थ का फ़ारसी भाषा में अजीज शम्स बहा ए नूरी ने अनुवाद किया।

सन् 1362 में सुलतान फिरोज शाह तुगलक ने नगरकोट पर आक्रमण किया। वहाँ उसे ज्वालामुखी मन्दिर से 1300 प्राचीन ग्रन्थ मिले। अधिकांश ग्रन्थ नष्ट कर दिए गए, उनमें से कुछ ग्रन्थों का फ़ारसी भाषा में अनुवाद किया गया। इज्जुद्दीन खालिद खानी ने *'दालाएल फिरोजशाही'* तथा *'अब्दुल'* शीर्षक से भौतिक विज्ञान तथा खगोल विज्ञान के ग्रन्थों को अनुवाद किया।

सुलतान जायनुल अबादीन ने कई संस्कृत ग्रन्थों का अनुवाद करवाया। सुलतान सिकन्दर लोदी ने भी कई ग्रन्थों का अनुवाद फ़ारसी भाषा को समृद्ध करने के लिए करवाया। गिने चुने संस्कृत ग्रन्थों का अरबी तथा फ़ारसी भाषा में अनुवाद करने के लिए मुगल शहंशाह अकबर ने 'मकतबखाना' नाम से एक विभाग कायम किया था। अकबर के उत्तराधिकारी जहाँगीर के काल में भी वैसा होता रहा। बाद के दिनों में उनके पोते दाराशिकोह ने *उपनिषदों* का अनुवाद फ़ारसी में करवाया।

अन्तकुवेतिल दुपरोन ने अरबी, फ़ारसी में अनूदित संस्कृत ग्रन्थों का फ्रैंच तथा लैटिन भाषाओं में अनुवाद किया जो यूरोप में भारतीय साहित्य को लोकप्रिय बनाने में सहायक हुआ। जर्मन विद्वान स्कोपन्हार भी इन्हीं से प्रभावित हुए थे।

भारतीय पाठ के सभी अरबी अनुवाद और सभी अनुवादकों के बारे में चर्चा करना दुष्कर है, पर कुछ ऐसे नाम हैं, जिन्होंने इतिहास के पन्नों पर अमिट छाप छोड़ी है। और इस क्षेत्र में इतने बड़े काम किए हैं कि संसार उनको भुला नहीं सकता।

7.7 सारांश

प्राचीन काल से ही भारतीय कथाओं के प्रति अरबवासियों की उत्सुकता बनी रही है। ढेर सारे भारतीय शब्द अरब पहुँच कर अरबी भाषा को मालामाल करते रहे हैं। अरब व्यापारियों के भारतीय तटों पर जब आने-जाने का सिलासिला आरम्भ हुआ तो शब्दावलियों के इस आदान-प्रदान में और तेजी आई। भारतीय कथाएँ, विशेष रूप से *पंचतन्त्र* का अरबी में अनुवाद हुआ। इसी के साथ ही अरबवासियों ने ज्योतिष-शास्त्र, खगोल-विज्ञान, गणित

और आयुर्वेद के क्षेत्र में भारतीय पुस्तकों का अनुवाद कर भरपूर लाभ उठाया। अब्बासी खलीफा ने बैतुत हिकमा (हाउस ऑफ विसडम) की स्थापना की और अनुवाद के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण कार्य करवाया। ढेर सारी प्रसिद्ध भारतीय कृतियों का अरबी भाषा में अनुवाद हुआ।

7.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. हिन्दुस्तानी कृतियों के अरबी अनुवाद की परम्परा का वर्णन कीजिए।
2. अब्बासी युग में अनुवाद के क्षेत्र में हुए कार्यों पर प्रकाश डालिए।
3. अनुवाद के माध्यम से अरबों ने भारतीय आयुर्वेद से किस प्रकार लाभ उठाया उल्लेख कीजिए?
4. *पंचतन्त्र* का अरबी अनुवाद कैसे हुआ, विस्तार से लिखिए?
5. अलिफ लैला व लैला मूल रूप से भारतीय कथाओं पर आधारित है—सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।
6. भारतीय ग्रन्थों का अनुवाद कर गणितीय ज्ञान में अरबवासियों ने क्या लाभ उठाया?

7.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- डॉ. जुबैद अहमद, *अरबी अदबियाद में पाक व हिन्द का हिस्सा।*
- तरीक़ रहमान, *लैंग्वेज, आइडियोलॉजी एण्ड पावर।*
- अबुल हसन अली हसनी नदवी, *अमुसलिनुन फिल हिन्द।*
- अब्दुल हई हसनी, *अलसकाफा अलइस्लामिया फिल हिन्द।*
- अलबिरूनी, *भारत।*
- इब्न अलमुक़फ्फा, *कलीला व दिमना।*

इकाई 8 भारतीय ग्रन्थों के फ़ारसी अनुवाद

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 पृष्ठभूमि

8.3 हिन्दुस्तानी पाठ के फ़ारसी अनुवाद की परम्परा

8.4 सारांश

8.5 अभ्यास के लिए प्रश्न

8.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

8.0 उद्देश्य

यह इकाई भारतीय ग्रन्थों के फ़ारसी अनुवाद से सम्बन्धित है। इस इकाई का पढ़ने से अनुवाद अध्ययन में एम.ए. करने वाले शिक्षार्थियों को भारतीय ग्रन्थों के फ़ारसी अनुवाद की संक्षिप्त जानकारी मिलेगी। इस इकाई का उद्देश्य पाठकों को अनुवाद के विभिन्न पहलुओं से अवगत कराना है।

इसमें अनुवाद के विषय और उसकी अहमियत के बारे में जानकारी दी जाएगी और बताया जाएगा कि भारतवर्ष में तुर्कों एवं इरानियों के आक्रमण एवं आगमन के पश्चात लगभग आठ सौ वर्षों तक बहुत-सी भारतीय भाषाओं में लिखित हजारों दस्तावेजों का अनुवाद फ़ारसी भाषा में हुआ। इस इकाई के अन्त में आप जान पाएँगे कि अनुवाद की प्रासंगिकता क्या है? खास तौर से जिन दस्तावेजों, लेखों एवं किताबों का अनुवाद हिन्दी, संस्कृत अथवा अन्य भारतीय भाषाओं से फ़ारसी भाषा में हुआ उसकी ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं धार्मिक महत्ता पर प्रकाश डालने की भरपूर कोशिश की गई है। शिक्षार्थी इसकी प्रासंगिकता के मद्देनजर इस विषय पर शोध कार्य का भी सही चयन कर सकेंगे।

8.1 प्रस्तावना

प्राचीन काल से ही भारत एवं इरान (फारस) के सम्बन्ध अत्यन्त मधुर रहे हैं। व्यापारिक, सांस्कृतिक और बौद्धिक सन्दर्भों में दोनों देशों का अनुराग एक दूसरे के प्रति गहरा रहा है। दोनों में पारस्परिक हित की प्रतिबद्धता बनी रही है। इस बात का सबूत हम इतिहास के पन्नों में देख सकते हैं। जाहिर है कि इस पारस्परिकता की शुरुआत का आधार अनुवाद है। हम जानते हैं कि अनुवाद एक ऐसी प्रणाली है जो किसी भाषा के शब्दों को नया जीवन देती है। कई बार तो अनुवाद मृत भाषा को पुर्नजीवित करने का काम करता है। इसके अलावा किसी भी देश, प्रदेश एवं विदेशों की संस्कृति, समाज, जनजीवन एवं उनकी कार्यशैली को समझने, उस पर अमल करने एवं उससे सीख लेने का रास्ता भी बताता है। हिन्दुस्तान और इरान के सन्दर्भ में यह रोचक विषय है, इन दो देशों ने एक दूसरे के सामाजिक एवं सांस्कृतिक तत्त्वों को अपनी-अपनी संस्कृति में ढालने की कामयाब कोशिश की है। बारहवीं शताब्दी की शुरुआत से लेकर सन् 1857 के विद्रोह के बाद सन् 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (इण्डियन नेशनल कांग्रेस) की स्थापना-काल तक में ऐसी ढेर सारी किताबों, आलेखों, दस्तावेजों का अनुवाद फ़ारसी भाषा में हुआ, जो हिन्दी, संस्कृत अथवा अन्य भारतीय भाषाओं में थीं। हर काल में, चाहे वह दिल्ली सल्तनत के इल्तुतमिश का हो या फिर मुगल साम्राज्य के अन्तिम चिराग बहादुरशाह जफर का, इन शासकों और राजाओं ने साहित्य, संगीत, चिकित्सा पद्धति, धार्मिक ग्रन्थों, कला, संस्कृति, भूगोल, गणित एवं चित्रकला के क्षेत्र में बड़े पैमाने पर अनुवाद का कार्य हुआ। मुगलशासन

में सन् 1657 तक दाराशिकोह ने बाबन उपनिषदों और अन्य धार्मिक ग्रन्थों का अनुवाद संस्कृत से फ़ारसी भाषा में किया और करवाया, जो बाद के दिनों में अन्य यूरोपीय भाषाओं में अनूदित हुई और जिसने भारतीय संस्कृति एवं धार्मिक आस्था को अन्तरराष्ट्रीय आयाम दिया।

8.2 पृष्ठभूमि

दूसरे देश की जमीन पर पाँव रखते ही किसी नागरिक के लिए वहाँ की भाषा का ज्ञान होना आवश्यक हो जाता है, ताकि वह कार्य, व्यापार, भाव, धारणा से औरों को परिचित करा सके, दूसरों के समक्ष खुद को अभिव्यक्त कर सके, और यह कार्य अनुवाद के माध्यम से सम्भव है। वैसे ही, जब कभी कोई देश किसी दूसरे देश पर आक्रमण करता है, तो उसे उस देश के इतिहास, सभ्यता एवं संस्कृति को समझने की आवश्यकता होती है, यह समझ बनाने का आधार अनुवाद ही होता है। अनुवाद के जरिए ही आक्रमणकारी देश उस देश की भाषा को जानने एवं समझने की कोशिश करता है। भारत के सन्दर्भ में भी ऐसा ही हुआ, फर्क केवल इतना है कि भारत में जो शासक तुर्कों अथवा इरानियों के काल में आए, उन्होंने इस देश को अपना देश समझा और अन्य आक्रमणकारियों की तरह इस देश को लूटा नहीं, और न ही भारत की पूँजी एवं प्राकृतिक सम्पदा को निर्यात कर अपने देश भेजा, जैसा फ्रांसीसी, पुर्तगाली एवं अंग्रेजों के समय में हुआ, बल्कि हर क्षेत्र में उन्होंने अपना योगदान दिया, अपनी यादगारी को सदियों के लिए अमर कर दिया। दिल्ली सल्तनत से लेकर मुगल साम्राज्य के विघटन तक के कई राजाओं और शासकों ने इस देश की जबान को समझने के लिए नए विभाग खोले जिसमें अनुवाद विभाग प्रमुख है। उस समय हिन्दी, फ़ारसी एवं संस्कृत भाषा का ज्ञान होना एक बड़ी उपलब्धि थी, रोजगार पाने का एक स्रोत भी था।

12वीं शताब्दी से लेकर 19वीं शताब्दी तक यहाँ के शासकों ने ढेरो हिन्दी एवं संस्कृत ग्रन्थों का अनुवाद फ़ारसी भाषा में कराया। किसी भी नए देश में अपना साम्राज्य पूरी तरह स्थापित करने के लिए जरूरी था कि शासक उस देश की सांस्कृतिक, सामाजिक संरचना एवं नागरिक व्यवस्था, धार्मिक आस्था, शासकीय पद्धति को अच्छी तरह समझे। किसी नए शासक के लिए यह बात केवल अनुवाद के द्वारा ही सम्भव थी। प्राचीन भारत में वैदिक काल से लेकर सातवीं शताब्दी तक गणित, खगोलशास्त्र, औषधि, सामान्य एवं यौन स्वास्थ्य, धार्मिक आस्था, विज्ञान, दर्शन, संगीत कला, आयुर्वेद चिकित्सा प्रणाली, गीत, राग जैसे विषयों पर लिखी गई ऐसी ढेर सारी किताबें, निबन्ध इत्यादि हैं, जिनका फ़ारसी में अनुवाद दिल्ली सल्तनत से मुगल साम्राज्य तक के विभिन्न सम्राटों ने कराया।

8.3 हिन्दुस्तानी पाठ के फ़ारसी अनुवाद की परम्परा

मध्यकालीन भारत (12वीं से 18वीं शताब्दी) का काल हिन्दुस्तान एवं इरान के इतिहास में स्वर्ण युग को पारिभाषित करता है। यह वह काल है जिसमें विभिन्न प्रकार के दस्तावेजों का अनुवाद फ़ारसी भाषा में हुआ और विभिन्न प्रकार के फ़ारसी दस्तावेजों का भी अनुवाद भारतीय भाषा में हुआ। दिल्ली सल्तनत से मुगल साम्राज्य के शासकों एवं राजाओं ने सदियों तक इस अनुवाद की प्रक्रिया में बढ़ चढ़ कर हिस्सा लिया, साहित्य के लगभग हर क्षेत्र में अनुवाद का अभियान चलाया, जिसमें इतिहास, सामाज शास्त्र, संस्कृति, भूगोल, गणित, संगीत, कला, विज्ञान इत्यादि विषयों पर विद्वानों ने अनुवाद कार्य को अंजाम दिया, जिसका सदुपयोग आज की पीढ़ी कर रही है।

अनुवाद के क्षेत्र में इतिहास के झरोखों से जिस सबसे महत्त्वपूर्ण किताब का नाम मिलता है वह है '*पंचतन्त्र*।' विष्णु शर्मा द्वारा संस्कृत में लिखी गई इस कृति का सबसे पहले पहलवी भाषा में अनुवाद हुआ। इसके पश्चात पहलवी से फ़ारसी अनुवाद '*कलीला व दिमना*' नाम से हुआ। फ़ारसी भाषा में अनूदित होने के बाद इस किताब का अनुवाद अन्य यूरोपीय भाषाओं में हुआ, जिसमें सबसे पहला नाम फ्रांसीसी भाषा का आता है। इतिहासकारों के एक मत के अनुसार फ्रांस की क्रान्ति में *पंचतन्त्र* की भूमिका सराहनीय रही है। जैसा कि हम सब जानते हैं—*पंचतन्त्र* में पशु-पक्षियों, एवं पेड़-पौधों को पात्र बनाकर कहानियाँ रची गई हैं, जिसे हम प्रतीकात्मक साहित्य कहते हैं। फ्रांस में भी इन्हीं कहानियों एवं कथाओं का प्रतीकात्मक उपयोग करके आम

जनता को जागरूक किया गया, और दुर्व्यवस्था के खिलाफ एक क्रान्ति की चिनगारी को हवा दी गई, फलस्वरूप क्रान्ति सफल हुई।

गुनयातुल मुनिया (Ghunyatul Munya) संगीत पर आधारित एक किताब है, जो सुल्तान अबुल मुजफ्फरशाह (सन् 1774-75) के शासनकाल में लिखी गई। इसमें भारतीय संगीत, संगीत रत्नावली, संगीत विनोद, संगीत मुद्रा एवं राग अरनव जैसे संस्कृत भाषा के आलेखों, निबन्धों का विस्तृत वर्णन है। इसकी हस्तलिपि आज भी दण्डियन ऑफिस लाउडर में सुरक्षित है। इसके अलावा अन्य किताबें भी लिखी गईं, जिनमें सिकन्दर लोदी के समय (सन् 1489-1516) में संगीत एवं कला के क्षेत्र में लिखी गई किताब *लहजते सिकन्दर शाही* उल्लेखनीय है। उमर समा यह्या ने यह किताब संस्कृत भाषा में लिखित किताबों एवं अनुवादकों की मदद से लिखी। उन्होंने इस किताब को लिखने के लिए निम्नलिखित जिन संस्कृत स्रोतों का अनुवाद फ़ारसी में किया, वे हैं— *संगीत मकारण्डा, संगीत समय सार* एवं *संगीत कलपात्रु*। इब्राहिम आदिलशाह (सन् 1580-1627) के काल में *नवरसनामा* शीर्षक से एक लेख लिखा गया, जिसमें दक्कन (दक्षिण) के संगीत का फ़ारसी में रूपान्तरण हुआ। यह लेख छप्पन गीतों का संग्रह है, जो ध्रुपवद से लिया गया। *नवरसनामा* आज भी *प्रिन्स ऑफ वेल्स म्यूजियम* और *खुदाबक्श पुस्तकालय, पटना* में अभिलेख के रूप में सुरक्षित है। *नवरसनामा* में सतरह रागों—भूपाली, रामकली, भैरव, हिजाज, मारू, असावरी, देसी, पुरबी, तोड़ी, मल्हार, धनसरी, गौड़ी कल्याण, केदार एवं नवरुज का वर्णन है।

मुगल सम्राट शाहजहाँ ने नायक बाक्शु के लिखे एक हजार से अधिक ध्रुवपद गीतों पर कार्य करने का शाही फरमान जारी किया था। पूरे भारत से दो हजार ध्रुवपद इकट्ठे किए गए, जिनमें से एक हजार गीतों में संस्कृत और फ़ारसी भाषा के शब्द हैं, इस किताब का नाम *'सहरसा'* दिया गया। औरंगजेब के काल में मिरजा रोशन जमीर ने फ़ारसी में *'पारिजातक'* लिखा, जो पण्डित अहोबल की किताब *'संगीत पारिजात'* का अनुवाद है। तानसेन के काल की प्रख्यात किताब *'बोधप्रकाश'* का फ़ारसी भाषा में अनुवाद *'तशहीरुल मौसीकी'* शीर्षक से मोहम्मद अकबर अरजनी ने किया। इसके अलावा सन् 1662-63 में आमीर फ्रक्रीरुल्लाह सैफ खान ने *'राग दर्पण'* शीर्षक से एक किताब लिखी जो मौलाना आजाद पुस्तकालय, अलीगढ़ में सुरक्षित है। यह संस्कृत की कृति *'मनकौतूहल'* का फ़ारसी भाषा में अनुवाद है। इस किताब की तीन प्रतियाँ सालारजंग संग्राहलय, हैदराबाद एवं जामिया मिल्लिया इस्लामिया में भी सुरक्षित है। यह किताब लिखने के दौरान लेखक ने भारतीय भाषा की चार और कृतियों—*नृत्य नृन्या, रीसाला सैयद मंसूर, राम प्रकाश एवं चन्द्रावती*—का अध्ययन और अनुवाद किया। औरंगजेब के शासनकाल में काजी हसन ने *'संगीत दर्पण'* किताब का फ़ारसी अनुवाद 'शम्सुल अस्वात' शीर्षक से किया। इसकी दो प्रतियाँ सालारजंग संग्रहालय, हैदराबाद में मौजूद हैं। ग्वालियर के राजा मानसिंह के शासनकाल में *संगीत क्रम* का अनुवाद *'मरिफतुल अरवाह'* शीर्षक से फ़ारसी में अठारहवीं शताब्दी में हुआ। सालारजंग संग्रहालय, हैदराबाद में इसकी प्रतियाँ सुरक्षित हैं।

मुगल शासन काल में *रामायण* एवं *महाभारत* जैसे सुप्रसिद्ध धार्मिक ग्रन्थों का अनुवाद फ़ारसी भाषा में हुआ। कश्मीर के शासक जैनुल आबीदीन एवं बंगाल के शासक हुसैनशाह ने संस्कृत एवं हिन्दी के लेखों का अनुवाद फ़ारसी भाषा में कराया। मुगल राजवंश के दाराशिकोह एक धार्मिक व्यक्तित्व के दूरदर्शी इन्सान थे, उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम एकता और अखण्डता को और मजबूत करने हेतु हिन्दू धर्म-ग्रन्थों का फ़ारसी में अनुवाद करवाया, ताकि मुस्लिम वर्ग भी इसे पढ़कर हिन्दू धर्म को समझने का प्रयास करे। दाराशिकोह ने सातवें सिख गुरु 'गुरुहर राय' के साथ अच्छे, दोस्ताना एवं मधुर सम्बन्ध बनाए; इस्लाम और हिन्दू धर्म (सनातन धर्म) में समानता तलाशने की जरूरत महसूस की, और बावन *उपनिषदों* का अनुवाद फ़ारसी भाषा में कराया, ताकि इन उपनिषदों को मुसलमान भी पढ़ और समझ सके, और इन दोनों धर्मों की समानताओं को समझकर देश की एकता को मजबूती दे सके। दाराशिकोह की सुविख्यात कृति *'मज्म-उल-बहरैन'* (दो सागर का संगम) है। इस कृति में सनातन धर्म एवं इस्लाम धर्म की समानताओं पर शोध किया गया है। जिस तरह दो समुद्र एक दूसरे में समाकर एक हो जाते हैं। ठीक उसी तरह इन दो धर्मों में ढेर सारी समानताएँ हैं, जो एक दूसरे का साथ देकर, परस्पर मिलकर एक हो जाने का सन्देश देती है। दिल्ली में कश्मीरी गेट के पास दाराशिकोह द्वारा स्थापित एक पुस्तकालय आज भी मौजूद है, जहाँ नायाब दस्तावेज़ सुरक्षित हैं।

अकबर महान के शासनकाल में तुलसीदास एवं सूरदास के साहित्यिक कार्यों का फ़ारसी में अनुवाद हुआ। इसी काल में अबुल फजल के भाई फैजी ने ढेर सारी संस्कृत किताबों एवं दस्तावेजों का फ़ारसी भाषा में अनुवाद किया। अकबर ने एक अनुवाद विभाग की भी स्थापना की, जहाँ विश्वप्रसिद्ध *रामायण, महाभारत, अथर्वेद, भगवद्गीता* एवं *पंचतन्त्र* जैसी विश्व प्रसिद्ध कृतियों, दस्तावेजों का अनुवाद संस्कृत एवं अन्य भारतीय भाषाओं से फ़ारसी जबान में हुआ।

यूरोपीय नागरिकों के लिए संस्कृत भाषा शुरू से ही विदेशी, और अबूझ भाषा रही। सतरहवीं शताब्दी के बाद ही वे उपनिषदों को जान, समझ पाए। जब दाराशिकोह ने सन् 1657 में बाबन उपनिषदों का अनुवाद फ़ारसी भाषा में कराया, इसके बाद एक फ्रांसीसी विद्वान ने दाराशिकोह के फ़ारसी अनुवाद का लैटिन भाषा में अनुवाद किया। दाराशिकोह के उपनिषदों को फ़ारसी अनुवाद के लगभग एक शताब्दी के बाद यूरोपियों ने उपनिषदों को पढ़ना और जानना शुरू किया, जिसका अनुवाद लैटिन भाषा में किया गया था। दाराशिकोह ने बनारस से पण्डितों एवं विद्वानों को आमन्त्रित कर इस महान अनुवाद का कार्य सम्पन्न करवाया, शायद इसी वजह से औरंगजेब ने दाराशिकोह को नास्तिक करार दिया। इतिहासकारों के अनुसार दाराशिकोह के अनुवाद कार्यों ने ही उपनिषदों एवं अन्य धार्मिक ग्रन्थों को यूरोपीय देशों में परिचय कराया, जिसके परिणामस्वरूप आज तक अनगिनत शोध कार्य विदेशियों द्वारा इन ग्रन्थों पर हो चुके हैं।

औरंगजेब के काल में मिर्जा खान ने *'तुहफतुल हिन्द'* शीर्षक से एक किताब लिखी, जिसमें हिन्दी व्याकरण, भाषा, अक्षरों एवं वाक्य संरचना का विस्तृत वर्णन किया गया है। इसके अलावा मध्यकालीन भारत में एक और प्रसिद्ध पुस्तक *'उस्लूने नगमाते आसिफी'* फ़ारसी भाषा में लिखी गई, जिसमें लेखक गुलाम रजा बिन मोहम्मद पनाह ने छह अध्यायों में स्वर, राग, ताल, प्रबन्ध, प्रकीर्ण एवं संगीत के यन्त्रों का विस्तार से आकलन किया है, इसकी एक हस्तलिपि डाक्टर जाकिर हुसैन पुस्तकालय, जामिया मिल्लिया इस्लामिया में उपलब्ध है। सूर वंश के राजा शेरशाह सूरी ने हिन्दी कवियों एवं लेखकों को बहुत प्रोत्साहित किया। *मधुमालती* के रचनाकार अवधी कवि मंझन की कई कविताओं का अनुवाद फ़ारसी भाषा में हुआ। अकबर ने *'रामा'* शीर्षक की एक किताब का अनुवाद संस्कृत से फ़ारसी में किया, जिसकी हस्तलिखित प्रतियाँ वाशिंगटन डी.सी. की ओपेन गैलरी में है। सुल्तान फिरोज इब्ने तुगलक ने जब नागरकोट किला पर आक्रमण कर कब्जा किया, तभी उसने कई मन्दिरों से लगभग तेरह सौ संस्कृत किताबें इकट्ठी कर एक पुस्तकालय की स्थापना की, जिसमें गणित, विज्ञान, खगोलशास्त्र इत्यादि पर आधारित किताबें थीं, उनमें से कुछ किताबों का अनुवाद फ़ारसी भाषा में हुआ।

जियाउद्दीन नक्सबन्दी ने चौदहवीं शताब्दी में संस्कृत भाषा में लिखित यौन स्वास्थ्य विषयक किताब का फ़ारसी भाषा में अनुवाद किया, जिसकी एक प्रति राष्ट्रीय औषधि पुस्तकालय में सुरक्षित है। औषधि के क्षेत्र में भी कई प्राचीन भारतीय ग्रन्थों का अनुवाद फ़ारसी भाषा में हुआ जो मूलतः संस्कृत में लिखी गई थी। भारत एवं इरान दोनों देशों ने मिलकर औषधि शोध (यूनानी एवं आयुर्वेद) के क्षेत्र में नए आयाम जोड़े। औषधि के क्षेत्र में मुगल काल के दो महत्त्वपूर्ण नाम अमानुल्लाह खान एवं नुरुद्दीन शिराज़ी हैं, जिन्होंने संस्कृत में लिखी किताब *मदनविनोद* का फ़ारसी में अनुवाद किया। नुरुद्दीन शिराज़ी ने *तिब्बे दाराशिकोही विश्वकोश* तैयार किया जो औषधि पर आधारित फ़ारसी भाषा का सबसे बड़ा विश्वकोश है। इसके अलावा संस्कृत में लिखी एक वैज्ञानिक किताब *सालिहोत्र* का अनुवाद भी फ़ारसी भाषा में सोलहवीं शताब्दी में हुआ। कोकशास्त्र एवं यौन स्वास्थ्य पर आधारित कई चित्रों की रचना फ़ारसी भाषा में हुई जिसके द्वारा यौन ज्ञान देने की कोशिश की गई, इस पर एक किताब *लज्जतुक निसा (द' इन्ज्वाइमेण्ट ऑफ वुमन)* लिखी गई। कोका पण्डित ने संस्कृत में *'रात्रिहास्य'* शीर्षक एक किताब लिखी, जिसका अनुवाद फ़ारसी भाषा में हुआ, इसके अलावा ऐसे बहुत सारे चित्र पाए गए हैं जिनमें फ़ारसी भाषा में प्रेम-कला (आर्ट ऑफ लव) का वर्णन है।

विक्रमादित्य के काल में लिखी गई किताब *'सिंहासन बत्तीसी'* का अनुवाद फ़ारसी भाषा में हुआ, इस किताब में बत्तीस अध्याय हैं, जो सिंहासन के सुव्यवस्थित संचालन एवं सुघर प्रशासन पर आधारित है। आयुर्वेद की ढेर सारी किताबों का अनुवाद संस्कृत से फ़ारसी में हुआ। इनमें मशहूर किताब *'राहत-अल-फारस'* है जो घोड़ों के इलाज पर आधारित

है, इसके रचनाकार आनन्दराम मुखलिस हैं। सोलहवीं शताब्दी में *'मदन-अल-शिफाए-सिकन्दर शाही'* शीर्षक किताब की रचना हिन्दी एवं संस्कृत में दक्षता हासिल किए हुए कई सिद्धहस्त विद्वानों ने मिलकर की। मुगल काल में इसाई औषधि एवं भेषज विद्वानों ने भी कुछ किताबों का अनुवाद फ़ारसी भाषा में किया, जिसमें सबसे बड़ा नाम दा-सिलवा परिवार का आता है। योग विद्या पर लिखित कई किताबों का अनुवाद संस्कृत से फ़ारसी में हुआ जिसमें *अमृतकुण्ड* (The pool of Necten) का नाम सर्वप्रथम आता है। इस किताब में चौंसठ योगिनी का ज़िक्र है। इनके अधिनायक का नाम इस किताब में कामुक देव है जो योगिनियों का सर्वेसर्वा है, मोहम्मद गौस ग्वालियरी ने इसका अनुवाद फ़ारसी भाषा में किया है। आठवीं शताब्दी में संगीत पर आधारित संस्कृत की एक किताब *'शुक सप्तिका'* का अनुवाद फ़ारसी भाषा में इमाद इब्ने मुहम्मद अल तागरी ने *जवाहिर-अल-असमार* के नाम से किया। अब्दुल करीम ने *जवाहिर-अल-मुस्काते महमूदी* शीर्षक किताब लिखी जो फ़ारसी भाषा में है, पर इस किताब को लिखने में लेखक ने संस्कृत एवं हिन्दी भाषा के स्रोतों पर काफी शोध किया, इनके अनुवाद की मदद भी इस किताब को लिखने के दौरान ली। सन् 1690 में आमिर लोदी ने संगीत एवं राग पर आधारित *'मिरातुल हियाल'* शीर्षक फ़ारसी किताब का अनुवाद संस्कृत भाषा से किया। इसमें भारतीयों के जीवन पर आधारित गीत लिखे गए हैं। सन् 1718 में अब्दुर रउफ ने *अबुल-अल-निगम* किताब लिखी जो फारुखसियार को समर्पित की गई। भारतीय संगीत के वर्णन से सम्पन्न इस किताब में सत्ताइस अध्याय हैं।

सन् 1682 में सूफी अब्दुर रहमान ने संस्कृत की दार्शनिक कविताओं का फ़ारसी अनुवाद *मिरातुल हकायक* (*मिरर ऑफ रियलिटीज*) शीर्षक से किया, यह अनुवाद भगवद्गीता के अध्यायों से हुआ था। सुर, असुर, शिव आदि के अवतार और उद्भव की जानकारियों से भरपूर संस्कृत के प्रसिद्ध निबन्ध का फ़ारसी अनुवाद *मिरातुल मखलूकात* शीर्षक से अब्दुर रहमान चिश्ती ने किया। बनारस से पण्डितों एवं विद्वानों को आमन्त्रित कर दाराशिकोह ने बाबन उपनिषदों का फ़ारसी अनुवाद *सिर-ए-अकबर* शीर्षक से करवाया।

योग-साधना की प्रसिद्ध संस्कृत कृति *योगवशिष्ठ* का फ़ारसी अनुवाद *अतवार दर हाल-ए-असरार* शीर्षक से हुआ है। सूफी सरीफ कबाजानी ने इसका अनुवाद मुगल बादशाह जहाँगीर के लिए समर्पित किया, इसमें कुरुक्षेत्र के युद्ध के दौरान कृष्ण-अर्जुन वार्तालाप का जिक्र है। इसके अलावा सन् 1663 में लिखे कृष्ण मिश्र के प्रसिद्ध नाटक *प्रमोद चन्द्रोदय* का संस्कृत से फ़ारसी अनुवाद बनवाली दास ने किया, इसके रचनाकार कृष्ण मिश्र, दाराशिकोह के काल में मुंशी थे, इस कृति के फ़ारसी अनुवाद के बाद इसका नाम *गुलजार-ए-हाल* अथवा *तुले कमर मारिकत* रखा गया। संस्कृत के महान ग्रन्थों में से एक ग्रन्थ कल्हन की *राजतरंगिनी* है, जिसका फ़ारसी अनुवाद मौलाना शास मुहम्मद ने किया, इसके अलावा उन्होंने गीता का भी फ़ारसी में पद्यानुवाद किया। अमानुल्लाह खान मुगल साम्राज्य के बड़े ही काबिल वैद्य माने जाते थे, उन्होंने संस्कृत में लिखित *मदनविनोद* नामक औषधीय शब्दकोष का फ़ारसी अनुवाद *गंजे बदावर्द* शीर्षक से किया, जो बड़ी ही भव्य एवं विशिष्ट कृति है।

विदित है कि साहित्यिक कार्यों की महत्ता समय के साथ बढ़ती जाती है, जिन साहित्यिक कृतियों की रचना प्राचीन भारत में हुई, चाहे वह वैदिक काल हो या उत्तर वैदिक काल, मौर्यकाल हो या गुप्तकाल, बौद्ध काल हो या जैन काल, उस दौर में रची गई नायाब कृतियों, अभिलेखों का अगर आज हम अध्ययन कर पाते हैं, तो श्रेय केवल अनुवाद की प्रणाली को ही जाता है। हर समाज, साम्राज्य, प्रदेश एवं देश को अपनी साहित्यिक उपलब्धियों पर बड़ा गर्व होता है, पर इनके महत्त्व और विस्तार में तब और भी बढ़ोतरी हो जाती है, बल्कि चार चाँद लग जाते हैं जब इन कृतियों, अभिलेखों का अनुवाद किसी अन्तरराष्ट्रीय भाषा में होता है, इससे उन कृतियों, अभिलेखों के बहुगामी और बहुआयामी प्रभाव अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान सुनिश्चित करते हैं। हिन्दुस्तान के प्राचीन ग्रन्थों का अनुवाद जब फ़ारसी भाषा में हुआ और समय के प्रवाह के साथ-साथ यूरोपीय भाषाओं में उनका अनुवाद हुआ तो भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता को एक नई पहचान मिली। अनुवाद के जरिए, और अनुवाद के दौरान इरान और भारत ने एक दूसरे के हर पहलू को समझा, इरानियों को संस्कृत के अमूल्य ग्रन्थों के अनुवाद के बाद ही भारत को समझने में आसानी हुई। ये परस्पर सांस्कृतिक सम्बन्ध ही थे, जिसने दोनों देशों यानी शासकों एवं शासितों को एक डोर से बाँधे रखा, ये दोनों सभ्यताएँ एवं संस्कृति आपस में बहुत हद तक घुल मिल गई, इतिहास गवाह है कि इन सबके विकास में अनुवाद की बहुत बड़ी भूमिका रही है।

8.4 सारांश

भारत एवं इरान (फारस) के सम्बन्ध प्राचीन काल से मधुर रहे हैं। व्यापारिक, सांस्कृतिक और बौद्धिक सन्दर्भों में दोनों देशों का अनुराग एक दूसरे के प्रति गहरा रहा है। सपष्टतः इस पारस्परिकता की शुरुआत का आधार अनुवाद है। हर काल के राजाओं ने साहित्य, संगीत, चिकित्सा पद्धति, धार्मिक ग्रन्थों, कला, संस्कृति, भूगोल, गणित एवं चित्रकला के क्षेत्र में बड़े पैमाने पर अनुवाद-कार्य हुआ। मुगलशासन में सन् 1657 तक दाराशिकोह ने बावन उपनिषदों और अन्य धार्मिक ग्रन्थों का अनुवाद संस्कृत से फ़ारसी भाषा में किया और करवाया, जो बाद के दिनों में अन्य यूरोपीय भाषाओं में अनूदित हुई और जिसने भारतीय संस्कृति एवं धार्मिक आस्था को अन्तरराष्ट्रीय आयाम दिया।

12वीं सताब्दी से लेकर 19वीं शताब्दी तक यहाँ के शासकों ने ढेर सारी हिन्दी एवं संस्कृत ग्रन्थों का अनुवाद फ़ारसी भाषा में कराया। प्राचीन भारत में वैदिक काल से लेकर सातवीं शताब्दी तक गणित, खगोलशास्त्र, औषधि, सामान्य एवं यौन स्वास्थ्य, धार्मिक आस्था, विज्ञान, दर्शन, संगीत कला, आयुर्वेद चिकित्सा प्रणाली, गीत, राग जैसे विषयों पर लिखी गई ऐसी ढेर सारी किताबें, निबन्ध इत्यादि हैं, जिनका फ़ारसी में अनुवाद हुआ।

मध्यकालीन भारत में विभिन्न प्रकार के दस्तावेजों का अनुवाद फ़ारसी भाषा में हुआ और विभिन्न प्रकार के फ़ारसी दस्तावेजों का भी अनुवाद भारतीय भाषा में हुआ। दिल्ली सल्तनत से मुगल साम्राज्य के शासकों एवं राजाओं ने सदियों तक इस अनुवाद की प्रक्रिया में बढ़ चढ़ कर हिस्सा लिया, साहित्य के लगभग हर क्षेत्र में अनुवाद का अभियान चलाया, जिसमें इतिहास, सामाज शास्त्र, संस्कृति, भूगोल, गणित, संगीत, कला, विज्ञान इत्यादि विषयों पर विद्वानों ने अनुवाद के कार्य को अंजाम दिया, जिसका सदुपयोग आज की पीढ़ी कर रही है।

कलीला व दिमना शीर्षक से *पंचतन्त्र* का फारसी अनुवाद इतिहास प्रसिद्ध घटना है। फ़ारसी में अनूदित होने के बाद ही इसका अनुवाद अन्य यूरोपीय भाषाओं में हुआ, जिसमें सबसे पहला नाम फ्रांसीसी भाषा का आता है। इतिहासकारों के एक मत के अनुसार फ्रांस की क्रान्ति में *पंचतन्त्र* की भूमिका सराहनीय रही है।

मुगल सम्राट शाहजहाँ ने नायक बाक्शु के लिखे एक हजार से अधिक ध्रुवपद गीतों पर कार्य करने का शाही फरमान जारी किया था। पूरे भारत से दो हजार ध्रुवपद इकट्ठे किए गए, जिनमें से एक हजार गीतों में संस्कृत और फ़ारसी भाषा के शब्द हैं, इस किताब का नाम *'सहरसा'* दिया गया।

मुगल शासन काल में *रामायण* एवं *महाभारत* जैसे सुप्रसिद्ध धार्मिक ग्रन्थों का अनुवाद फ़ारसी भाषा में हुआ। कश्मीर के शासक जैनुल आबीदीन एवं बंगाल के शासक हुसैनशाह ने संस्कृत एवं हिन्दी के लेखों का अनुवाद फ़ारसी भाषा में कराया।

अकबर महान के शासनकाल में तुलसीदास एवं सूरदास के साहित्यिक कार्यों का फ़ारसी में अनुवाद हुआ। इसी काल में अबुल फजल के भाई फैजी ने ढेर सारी संस्कृत किताबों एवं दस्तावेजों का फ़ारसी भाषा में अनुवाद किया।

यूरोपीय नागरिकों के लिए संस्कृत भाषा शुरू से ही विदेशी, और अबूझ भाषा रही। सतरहवीं शताब्दी के बाद ही वे उपनिषदों को जान, समझ पाए। जब दाराशिकोह ने सन् 1657 में उपनिषदों का अनुवाद फ़ारसी भाषा में कराया, इसके बाद एक फ्रांसीसी विद्वान ने दाराशिकोह के फ़ारसी अनुवाद का लैटिन भाषा में अनुवाद किया।

भारत एवं इरान दोनों देशों ने मिलकर औषधि शोध (यूनानी एवं आयुर्वेद) के क्षेत्र में नए आयाम जोड़े। औषधि के क्षेत्र में मुगल काल के दो महत्त्वपूर्ण नाम अमानुल्लाह खान एवं नुरुद्दीन शिराज़ी हैं, जिन्होंने संस्कृत में लिखी किताब *मदनविनोद* का फ़ारसी में अनुवाद किया। नुरुद्दीन शिराज़ी ने *तिब्बे दाराशिकोही विश्वकोश* लिखा जो औषधि पर आधारित फ़ारसी भाषा का सबसे बड़ा विश्वकोश है।

विक्रमादित्य के काल में लिखी गई किताब *'सिंहासन बत्तीसी'* का अनुवाद फ़ारसी भाषा में हुआ, इस किताब में बत्तीस अध्याय हैं, जो सिंहासन के सुव्यवस्थित संचालन एवं सुघर प्रशासन पर आधारित हैं।

8.4 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. अनुवाद की प्रासंगिकता का संक्षिप्त वर्णन करें।
2. संस्कृत से फ़ारसी में अनूदित दस ऐसी किताबों के नाम, अनुवादकों के नाम सहित लिखें, जिसका उल्लेख इस इकाई में हुआ हो।
3. निम्नलिखित पर 500 शब्दों की टिप्पणी लिखें–

   पंचतन्त्र

   नौरसनामा

   राग दर्पण

   दाराशिकोह

8.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- नगेन्द्र, (सं.), *अनुवाद विज्ञान,* हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली, दिल्ली विश्वविद्यालय।
- तिवारी, भोलानाथ, *अनुवाद विज्ञान,* दिल्ली, शब्दकार।
- सैयद अली/*अरैबिक फॉर बिगिनर्स*
- प्रो. एम. सलीम/*अरैबिक फॉर स्कॉलर्स*
- अब्दुल सत्तार/*अरबी का मुअल्लिम*
- अब्दुल मजीद अल-नकवी/*मुअल्लिम-उल इंशा*
- अब्दुर रहमान अमश्तसरी/*किताब-उन-नहवे*
- अब्दुर रहमान अमश्तसरी/*किताब-उस-सर्फ*
- हमीदुद्दीन फरही/*अस्बाक उन नहवे*
- हमीदुद्दीन फरही/*अस्बाक उस सर्फ*
- अली अल-जीम व मुस्तफा अमीन/*अल नहौ उल-वजीह*
- जॉन ए हेवुड/*ए न्यू अरैबिक ग्रामर ऑफ दि रिटन लैंग्वेज*
- J.C. Catford, *Linguistic Theory of Translation.*
- George Steiner, *After Babel: Aspects of Language & Translation*, OUP, New York & London, 1975.
- Hardwick, Lorna, and St. Jerome, *Translating Words, Translating Culture*, Pub. Co. 2000 दाराशिकोह।

इकाई 9 अरबी ग्रन्थों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 अनूदित पाठों के विभिन्न विषय

9.2.1 धार्मिक पाठ

9.2.2 ऐतिहासिक प्रलेख

9.2.3 यात्रा वृत्तान्त

9.2.4 साहित्यिक पाठ

9.3 सारांश

9.4 अभ्यास के लिए प्रश्न

9.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

9.0 उद्देश्य

यह इकाई अरबी ग्रन्थों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद से सम्बन्धित है। इस इकाई को पढ़ने से अनुवाद अध्ययन में एम. ए. करने वाले शिक्षार्थियों को अरबी कृतियों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद की संक्षिप्त जानकारी मिलेगी। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- अरबी से भारतीय भाषाओं में अनूदित पाठों की उपयोगिता की व्याख्या कर सकेंगे;
- अरबी से भारतीय भाषाओं में अनूदित विभिन्न प्रकार के पाठों का वर्णन कर सकेंगे; और
- भारत-अरब ऐतिहासिक-सांस्कृतिक सम्बन्धों को रेखांकित कर सकेंगे।

9.1 प्रस्तावना

जब दो भिन्न भाषाओं और संस्कृतियों के लोग मिलते हैं तो प्रारम्भिक तौर पर वे अनुवादक या दुभाषिए की सहायता से एक-दूसरे को समझने का प्रयास करते हैं। वे एक-दूसरे की धार्मिक परम्पराओं, सांस्कृतिक स्वभाव तथा साहित्यिक रुचियों को जानने के लिए यह माध्यम अपनाते हैं। इस कथन के आलोक में हम देख सकते हैं कि बहुत से लोग अरबी भाषा के पाठ का विभिन्न भारतीय भाषाओं में अनुवाद कर उपलब्ध ज्ञान-सम्पदा के प्रचार- प्रसार में तल्लीन हैं। ऐसे प्रयासों ने हमारे देश की सांस्कृतिक-साहित्यिक विरासत को समृद्ध करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। अतः हमारे सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक इतिहास को सही परिप्रेक्ष्य में समझने के लिए इन अनूदित पाठों की जानकारी आवश्यक है। वस्तुतः इस आवश्यकता ने ही अरबी में पारंगत भारतीय लोगों को अरबी पुस्तकों, लेखों व अन्य साहित्यिक पाठों को विभिन्न भारतीय भाषाओं में, विशेषकर उर्दू और हिन्दी में अनुवाद करने के लिए प्रेरित किया। इस इकाई में अनुवाद के क्षेत्र में उनके प्रयासों को रेखांकित किया जाएगा।

9.2 अनूदित पाठों के विभिन्न विषय

9.2.1 धार्मिक पाठ

सर्वमान्य तथ्य है कि अरब के लोग मुख्यतः अपनी वाणिज्यिक वस्तुओं के व्यापार के लिए भारतीयों के सम्पर्क में आए। आरम्भ में उनकी व्यापारिक गतिविधियाँ मुख्यतः भारत के दक्षिण-पश्चिमी तट तक सीमित थीं। बाद में जब

लगभग सभी अरबों ने इस्लाम धर्म अपना लिया, तो उन्होंने अपने सम्पर्क में आए भारतीयों को अपने नए धर्म, नई मान्यताओं, आस्थाओं की जानकारी देनी शुरू की। शुरू-शुरू में इस्लाम के बारे में उनके उपदेश मौखिक होते थे, जिससे धीरे-धीरे कुछ नए धर्मान्तरितों को पवित्र कुरान का अर्थ समझने और अपनी क्षेत्रीय भाषाओं में इसके अनुवाद करने की प्रेरणा मिलती थी, इससे उनके अन्य हमवतन साथी भी किसी व्याख्याकार या अनुवादक की सहायता लिए बगैर, इस्लाम के सन्देश को सही-सही समझ पाते थे। इस प्रकार कुरान का प्रथम अनुवाद दिल्ली के शाह रफीउद्दीन (सन् 1749-1818) ने किया। इस अनुवाद की प्रमुख विशेषता इसमें मौजूद भाषा की रवानगी, प्रवाहमयता, सरलता और सरसता थी। कुरान के अन्य अनुवादकों ने भी अनुवाद की उनकी शैली का अनुसरण करने का हरसम्भव प्रयास किया। सचाई है कि आज तक कोई भी अनुवादक इस क्षेत्र में उन्हें मात नहीं दे सका। कुछ सालों बाद उनके छोटे भाई शाह अब्दुल कादिर देहलवी (सन् 1757-1815) ने कुरान का अनुवाद *मुद्हे-उल-कुरान* शीर्षक से किया और अपने बड़े भाई की शैली का अनुकरण करते हुए उन्होंने अपने अनुवाद को बोधगम्य और प्रवाहमय बनाने का बहुत प्रयास किया; पर वे अपने प्रयास में सफल नहीं हो सके। इसी कारण, शाह रफीउद्दीन का अनुवाद आज भी *कुरान* के सबसे अच्छे अनुवाद का आदर्श माना जाता है। लोगों का मानना है कि कुरान का सर्वाधिक सही और विश्वसनीय अनुवाद शाह रफीउद्दीन देहलवी का अनुवाद ही है। ऐसा मुख्यतः इसलिए कि उन्होंने कहीं भी अपनी ओर से शब्द या अर्थ में कुछ जोड़ने-घटाने का प्रयास नहीं किया।

इस समय बाजार में भारत की लगभग सभी बड़ी भाषाओं में कुरान के असंख्य अनुवाद उपलब्ध हैं। उनमें से कुछेक प्रसिद्ध अनुवाद हैं—अब्दुल कलाम आजाद (सन् 1888-1958) का *तजुर्मन-उल-कुरान,* अबुल अला मौदुदी का *तफहीम-उल-कुरान* तथा अमीन अहसान इस्लाही का *तदब्बुर-ए-कुरान* । ये सभी अनुवाद अपनी भाषा-शैली की सरलता, सरसता, बोधगम्यता और अर्थ की स्पष्टता के लिए जाने जाते हैं। इन सभी अनुवादकों और द्विभाषियों ने खुदा के सन्देश को बिल्कुल स्पष्ट शब्दों में सम्प्रेषित करने का प्रयास किया है। अपने अनूदित संस्करण को अधिक स्पष्ट व बोधगम्य बनाने के लिए उन्होंने अपने अनुवाद के साथ-साथ व्याख्यात्मक टिप्पणियाँ भी दी हैं। हालाँकि ऐसे प्रयासों की एक निष्पत्ति यह भी निकलती है कि बाहरी सहायता लिए बगैर कोई अनुवादक अर्थ सम्प्रेषित करने में पूरी तरह सक्षम नहीं होता।

कुरान के अनुवादों के अलावा भारतीय विद्वानों ने बड़ी संख्या में *'हदीसों'* (हजरत मुहम्मद के वचनों) का भी विभिन्न भारतीय भाषाओं में अर्थ/व्याख्या सम्प्रेषित करने का प्रयास किया है। ऐसा करते हुए उन्होंने अपने अनुवाद को सही और विश्वसनीय बनाने के लिए अत्यधिक सावधानी बरती है। उनका मानना था कि किसी भी *हदीस* का गलत अनुवाद समाज में अशान्ति फैला सकता है। इस बोध ने उन्हें उस काल का सम्पूर्ण साहित्य पढ़ने के लिए बाध्य किया, जिस काल में ये *'हदीस'* कहे गए और संकलित किए गए। वस्तुतः इन प्रयासों ने उन्हें ऐसा वातावरण उपलब्ध कराया जिसमें हदीसों के शब्द और मुहावरे सही परिप्रेक्ष्य में समझे जा सके। ऐसी विशेषताओं से सुसज्जित होकर, भारत के अरबी विद्वानों ने हदीसों के अधिकतम संग्रह, विशेषकर, *सही-उल-बुखारी, सही-उल-मुस्लिम, तिरमिजी शरीफ़ मुअत्ता इमाम मलिक* और *मिश्कात-उल-मसाबिह* आदि का अनुवाद किया। ये सभी अनूदित *'हदीस'* हमें पैगम्बर मुहम्मद के वचनों के सही अर्थ को समझने में मदद करते हैं। इन अनूदित *'हदीसों'* को पढ़ने के बाद कोई भी मनुष्य यह नहीं कह सकता कि भारतीय विद्वानों में पैगम्बर मुहम्मद के वचनों के अर्थों को उनके सही सामाजिक-सांस्कृतिक और धार्मिक परिप्रेक्ष्य में सम्प्रेषित करने के दक्षता या क्षमता नहीं है। अनुवाद पर इस प्रकार की पकड़ के लिए स्रोत और लक्ष्य दोनों भाषाओं में पूरी निपुणता आवश्यक है। शब्दों की अनेकार्थता सर्वविदित है, एक ही शब्द के अनेक अर्थ होते हैं, उनका सही अर्थ उस सन्दर्भ विशेष से ही निर्धारित होता है। हदीसों के भारतीय अनुवादकों ने इस तथ्य को बहुत महत्त्व दिया, इसीलिए उनकी अनूदित रचनाओं में सरलता और स्पष्टता के साथ-साथ सम्पूर्णता और विश्वसनीयता भी है।

9.2.2 ऐतिहासिक प्रलेख

भारत और अरब के बीच सम्बन्ध इस्लाम पूर्व युग से ही चला आ रहा है, जब अरबी नाविकों का भारत के पश्चिमी तटों से निरन्तर सम्पर्क बना हुआ था। भारतीय वस्तुएँ अरब प्रायद्वीप ले जाने के लिए वे तटीय क्षेत्रों की यात्राएँ

करते थे। इन अरबी नाविकों और जहाज चालकों ने अपने अरबी बन्धुओं को भारत के बारे में कहानियाँ कुछ इस प्रकार सुनाईं कि बहुत से अरब इतिहासकार भारतीय उपमहाद्वीप की यात्रा करने और भारत के साथ व्यापार करनेवाले व्यापारियों व नाविकों द्वारा सुनाई गई कहानियों की यथार्थता जानने के लिए प्रेरित हुए। ऐसे लेखकों व इतिहासकारों में इब्न-ए-हौकल, अल-मसूदी, अल-बिरूनी, बुजुर्ग. बी. शहरयार, अल-मक्दासी और अल याकूबी उत्कृष्ट स्थान रखते हैं। अल-बिरूनी ने *'तहकीक मा-लिल-हिन्द'* शीर्षक से भारत पर एक किताब लिखी। यह किताब प्राचीन भारतीय सभ्यता को सही परिप्रेक्ष्य में समझने का बहुत ही अच्छा स्रोत है। विभिन्न भारतीय भाषाओं में तत्परता से हुए इसके अनुवाद होने का यही मूल कारण है। इस पुस्तक के अवगाहन से प्रतीत होता है कि हिन्दू धर्मग्रन्थों को समझने की मुस्लिम विद्वानों की रुचि कितनी गहरी थी! अल-बिरूनी ने उन धर्मग्रन्थों को समझने के उद्देश्य से संस्कृत भाषा सीखी। वे यद्यपि *भगवद्गीता* और हिन्दू धर्म के अन्य धार्मिक ग्रन्थों का अर्थ ग्रहण करने में सफल रहे, संस्कृत सीखने में आई जिन कठिनाइयों का उन्हें सामना करना पड़ा, उसका उन्होंने वर्णन भी किया है। तकरीबन एक हजार साल पहले उन्होंने संस्कृत के कुछ श्लोकों का अरबी में अनुवाद करने का प्रयास किया था। इस प्रयास को किसी भी भारतीय भाषा से अरबी में अनुवाद का प्रथम प्रयास माना जाना चाहिए। अल-मक्सूदी और अन्य इतिहासकारों—इब्न-ए-हौकल, सुलेमान-अत्त-ताजिर, इब्न-ए-खरदाजबेह और अमार बिन बहर अल-जाहिज ने भारत की संस्कृति और सभ्यता के बारे में जो भी लिखा है, उसका उर्दू में *'हिन्दुस्तान : अरबों की नजर में'* शीर्षक से अनुवाद किया जा चुका है। इस प्रकार के अनुवाद हमें वर्त्तमान समय के भारत की सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की गहरी समझ उपलब्ध कराते हैं। वे मध्यकाल के दौरान हो रही, हमारी सामाजिक-सांस्कृतिक-राजनीतिक गतिविधियों के बारे में भी हमें जानकारी उपलब्ध कराते हैं। इसलिए विभिन्न भारतीय भाषाओं में इनका अनुवाद होना आवश्यक है। इसके लिए व्यक्ति को अरबी भाषा का ठोस ज्ञान होना चाहिए, विशेषकर प्राचीन अरबी का, क्योंकि स्रोत-पाठ में प्रयोग की गई भाषा ऐसे शब्दों, मुहावरों और वाक्यांशों से परिपूर्ण है, जो आज के समय में प्रचलित नहीं हैं। विशेषकर स्रोत (भाषा के) पाठ में संकलित स्थानों और व्यक्तियों के नाम अपने उच्चारण और लेखन में अत्यधिक परिवर्तित हो चुके हैं। समकालीन अरब लेखक, कवि और इतिहासकार भी भारतीय संस्कृति और इतिहास के बारे में किताबें व लेख लिख रहे हैं। किन्तु उनके प्रयासों को शायद ही किसी भारतीय भाषा में अनूदित किया गया हो।

9.2.3 यात्रा वृत्तान्त

भारतीय उपमहाद्वीप ने सदा से ही अपने निर्मल सौन्दर्य और प्राकृतिक वनस्पति तथा प्राणिजगत, मूल्यवान मसालों व अन्य वाणिज्यिक वस्तुओं के कारण अन्य क्षेत्रों के लोगों को आकर्षित किया। परिणामस्वरूप अनेक अरब यात्री और पर्यटक भारत आए और इसकी चिरस्थायी मनोहरता व सुन्दर भौगोलिक दृश्य देखकर मोहित हुए।

वे इसके सामाजिक रीति-रिवाजों के साथ-साथ प्राकृतिक वनस्पति व प्राणिजगत से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने अपने विचार और अनुभव किताबों के रूप में लिखे। उदाहरण के लिए इब्न-ए-बतूता (सन् 1304-1377) के नाम से ख्यात शम्सुद्दीन अबु अब्दुल्लाह ने सन् 1325-1354 के बीच एशिया अफ्रीका की यात्रा की। वे मूल रूप से तन्जियर, मोरक्को के रहने वाले थे और तुगलक वंश की सत्ता के दौरान भारत आए। वे यहाँ लम्बे समय तक रहे और अपने अवलोकन व अनुभव *'तुहफात-ओ-अल-नजर फी गरैब-अल-अमसर-वा-अजाएब-अल-असफर'* (अनोखे शहरों और अद्‌भुत सफर के बारे में दर्शक का तोहफा) में संकलित किए। यह यात्रा वृत्तान्त सामान्यतः *'रिहलत-ए- इब्नबतूता'* अर्थात् *'इब्नबतूता का सफरनामा'* नाम से जाना जाता है। उर्दू में यह *'सफरनामा-ए-इब्न-बतूता'* के नाम से प्रसिद्ध है। वस्तुतः यह *'रिहलत-ए-इब्न-बतूता'* का अनुवाद है। 'रिहलत' के लिए अंग्रेजी में 'ट्रैवलॉग' शब्द है और फ़ारसी/उर्दू में इसका अर्थ 'सफरनामा' है। इस *रिहलत* या *सफरनामा* का अनुवाद भारतीय उपमहाद्वीप की लगभग सभी बड़ी भाषाओं में हुआ है। इसके निरन्तर अनुवादों के कारण इब्न-ए-बतूता का नाम भारत देश के घर-घर में लिया जाता है। उनके यात्रा-वृत्तान्त को पढ़ने के बाद ऐसे तथ्य सामने आते हैं जो हमें मध्यकालीन भारत के सामाजिक-सांस्कृतिक इतिहास को समझने में सहायता करते हैं। यह देखना दिलचस्प है कि इब्न-ए-बतूता ने अपनी पुस्तक में न केवल हमारे देश की सामाजिक घटनाओं और स्थानीय रीति-रिवाजों का वर्णन किया अपितु जिन शहरों में वे रहे और जैसा भोजन व फल उन्होंने खाया, उनकी चर्चा भी विस्तार से की है। इस

कारण मध्यकाल के दौरान अरब यात्रियों द्वारा लिखे गए पाठों के लिए केवल अरबी भाषा का ज्ञान होना ही पर्याप्त नहीं है। वस्तुतः ऐसे पाठों के अनुवाद के लिए सम्बद्ध काल के भौगोलिक मानचित्र और सामाजिक लोकाचार का अच्छा ज्ञान होना भी आवश्यक है। अन्यथा पाठ के गलत अनुवाद की अत्यधिक सम्भावना बनी रहेगी। उदाहरण के लिए वर्त्तमान मालदीव को इब्न-ए-बतूता ने जैवत-उल-महल कहकर सम्बोधित किया है। यह शब्द हम में से अधिकांश लोगों के लिए नया है। इस स्थिति में अनुवादक से यह अपेक्षित है कि वह उस काल के अन्य यात्रा वृत्तान्त भी पढ़े और मालदीव के नाम में आए परिवर्तन को पाद-टिप्पणी में बताए।

मध्यकाल में भारत-यात्रा पर आने वाले एक और प्रसिद्ध यात्री थे ईरान के नाविक बुजुर्ग बी. शहरयार। उन्होंने भारत के बारे में अपने अनुभव और अवलोकनों को अपनी प्रसिद्ध पुस्तक *'किताब-ओ-अजायब-इल-हिन्द'* (भारत के आश्चर्यों की किताब) में दर्ज किया है। अरबी में लिखी इस पुस्तक में अन्य देशों के बारे में महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ और रोचक कहानियाँ भी हैं। इस पुस्तक का भारतीय सभ्यता और संस्कृति पर विशेष बल देने वाला अध्याय कुछ भारतीय भाषाओं में अनूदित हो चुका है। यह अनूदित वृत्तान्त मध्यकालीन भारत की सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियों के लिए एक महत्त्वपूर्ण स्रोत है। इस मूल्यवान पुस्तक का महत्त्व इस तथ्य से पता चलता है कि इसका अनुवाद अब तक संसार की लगभग सभी बड़ी भाषाओं में विभिन्न नामों से किया जा चुका है। इसमें पुनः कही गई कहानियाँ चाहे पूर्ण रूप से सही न हों किन्तु अन्ततः वे हमें मध्यकाल के दौरान लोगों के सामाजिक व्यवहारों की एक झलक उपलब्ध कराती हैं। ऐसी कहानियों का अनुवाद करते समय अनुवादक को उस क्षेत्र का भौगोलिक ज्ञान होना चाहिए, जहाँ से ये कहानियाँ उदित हुई हैं। चूँकि इस प्रकार की जानकारी की कमी अनूदित रचनाओं में भ्रम पैदा करेगी। इस भ्रम को दूर करने के लिए देशों और शहरों के नाम, जिनमें इस दौरान परिवर्तन आया है, उनका जिक्र भी अनुवादक को करना चाहिए। उदाहरण के लिए 'वेनिस' शहर को अरबी में 'बन्दूकिया' नाम से; जर्मनी को अलमानिया नाम से और भारत को हिन्द नाम से जाना जाता है। इस प्रकार के शब्दों का अनुवाद लक्ष्यभाषा के लोगों के बीच जिस तरह प्रचलित हों, टिप्पणी सहित उस तरह करना चाहिए। इन सब के आलोक में देशों व शहरों के नामों पर विशेष ध्यान देना चाहिए, चूँकि कालान्तर में इनमें से कुछ के नाम पूरी तरह से बदल चुके हैं। उदाहरण के लिए मद्रास और बम्बई को अब क्रमशः चेन्नई और मुम्बई नाम से जाना जाता है। इस प्रकार के मामले में आवश्यक है कि अनुवादक सम्बन्धित शहर, नगर और देश के नाम में हुए परिवर्तन को पाद-टिप्पणी में व्याख्यायित करे।

9.2.4 साहित्यिक पाठ

साहित्यिक पाठों का अनुवाद अत्यधिक श्रमसाध्य कार्य है, क्योंकि ये पाठ लेखक और कवि के मनोभावों और सम्वेदनाओं को अपने में संजोए हुए होते हैं, जिनका भावान्तरण अन्य भाषा में सहजता से नहीं हो पाता। अतः अनुवादक कभी-कभी मूल पाठ में निहित मनोभावों से विश्वासघात कर उसमें अपनी सम्वेदनाओं का समावेश कर देता है। इन सभी बाधाओं के बावजूद बहुत से भारतीय विद्वानों ने पूर्णतः साहित्यिक विषयों पर अरबी में लिखी गई किताबों और लेखों का अनुवाद किया है। उदाहरण के लिए इस्लाम पूर्व काल का लिखा अरबी साहित्य, विशेषकर इस साहित्य का काव्य अब तक भारत की कुछ प्रमुख भाषाओं में अनूदित हो चुका है और इस्लाम पूर्व साहित्य के इन्हीं अनुवादों के कारण हातिम ताई, लैला-मजनूँ, कैस इत्यादि चरित्र हमारे देश में अधिक लोकप्रिय हैं। यहाँ ध्यान देना आवश्यक है कि इस्लाम पूर्व अरबी साहित्य का अनुवाद अत्यन्त कठिन कार्य है। ऐसा इसलिए कि गैर-इस्लामिक अरबी लोग जिस भाषा का प्रयोग करते थे वह कठिन शब्दों, मुहावरों और लोकोक्तियों से ओत-प्रोत है। किन्तु हमारे भारतीय अनुवादक इस्लाम पूर्वकाल के अरबी साहित्य में छिपे अर्थों को समझने और सरल और सुस्पष्ट शैली में अनूदित करने में सफल रहे हैं। इस सम्बन्ध में यहाँ यह स्पष्ट करना दिलचस्प है कि इस्लाम पूर्वकाल में जो साहित्य सृजित हुआ वह मुख्यतः ऐसे विचारों से सम्बन्धित है जो कि इस्लामिक रूढ़िवादिता के अनुकूल नहीं है। इसके बावजूद अनेक भारतीय विद्वानों ने इसका अनुवाद इस आधार पर प्रस्तुत किया जिसके द्वारा ये अनुवाद कुरान पाक और पैगम्बर के कथनों के अर्थों को समझने में हमारी मदद करे। अतः इस्लाम पूर्वकाल के दौरान रचित साहित्य का अध्ययन अत्यावश्यक है : विशेषकर गैरइस्लामिक गायकों के *'सात कर्त्तव्य'* को, जो आज भी सर्वश्रेष्ठ अरबी काव्य माना जाता है। ये सम्बोधन गीत कठिन शब्दों और लोकोक्तियों से परिपूर्ण हैं। यही कारण है कि आधुनिक काल के शब्दकोश कभी-कभार उन लोगों की सहायता करने में असफल हो जाते हैं, जो

उनका अनुवाद करना चाहते हैं। इस परिस्थिति में मध्यकाल के दौरान तैयार किए गए शब्दकोश का प्रयोग करना अत्यावश्यक हो जाता है। अन्यथा अनूदित पाठ में त्रुटियाँ होने की अत्यधिक सम्भावनाएँ बढ़ जाती हैं।

दूसरी तरफ उन्होंने बड़ी कुशलता से इस्लामिक शिक्षाओं और विचारों पर आधारित साहित्य का विभिन्न भारतीय भाषाओं, खासकर उर्दू में अनुवाद किया। इन अनुवादों का उद्देश्य मूलतः इस्लाम और उसके सिद्धान्तों के बारे में अधिक से अधिक जानना था। चूँकि इस कार्य में सम्पूर्ण समतुल्यता आवश्यकता थी, अर्थात सटीक अनुवाद आवश्यक था, इसलिए अरबी भाषा व साहित्य के विद्वान अनुवादक ही इस कार्य को कर रहे थे। इसी कारण उन्होंने इस्लाम पूर्व अरबी साहित्य का गहन अध्ययन किया, बावजूद इसके कि यह साहित्य कुछ मायनों में इस्लाम की शिक्षाओं के विरुद्ध था। इससे यह तथ्य भी स्थापित होता है कि किसी भी भाषा पर पूर्ण अधिकार प्राप्त करने के लिए अनुवादक ऐसी रचनाएँ पढ़ने से भी नहीं घबराता, जो उसकी निजी धार्मिक भावनाओं के विरुद्ध हो। ऐसा इसलिए, क्योंकि यदि अनुवादक अपनी धार्मिक मान्यताओं के विपरीत किसी प्रकार के पाठ का अनुसरण या अनुवाद करता है तो इसका अर्थ यह नहीं है कि उसने उसे हमेशा के लिए स्वीकार कर लिया है या ग्रहण कर लिया है।

इसी प्रकार अरबी जाननेवाले हमारे भारतीय विद्वानों ने मध्यकाल में, विशेषकर *उम्मयद* और *अब्बासी* वंशों के काल में लिखे गए साहित्य का विभिन्न भारतीय भाषाओं में अनुवाद किया है। इस सम्बन्ध में *अलिफ-ओ-लैला-वा-लैला* की कहानियों का उल्लेख विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है। अपने अनूदित संस्करण के कारण ये कहानियाँ भारतीय उपमहाद्वीप में बहुत लोकप्रिय हैं। अनुवाद द्वारा ही सही, लोकप्रियता के इसी पहलू ने अनेक विद्वानों में अरबीभाषी नागरिक और अरब-संस्कृति के बारे में अधिक से अधिक जानने की प्रेरणा जगाई। इस सम्बन्ध में यह जानकारी और भी दिलचस्प है कि *अलिफ-ओ-लैला-वा लैला* की कई कहानियाँ भारतीय मूल की हैं, जैसे कि *सिन्दबाद जहाजी की कहानी*। हम जानते हैं कि प्रारम्भ में अरब लोग भारत को *'सिन्ध'* नाम से जानते थे। कालान्तर में उन्होंने सिन्धु नदी के उस पार के क्षेत्र को *हिन्द* कहना शुरू किया। सिन्दबाद जहाजी की कहानी दर्शाती है कि अरब लोगों की अपने पड़ोसी उपमहाद्वीप से काफी घनिष्ठता थी। भारत की अरब महासागर से लगी तटीय सीमा पर उनके उपनिवेश थे, निस्सन्देह इस घनिष्ठता से अनुवादकों और व्याख्याकारों की माँग उत्पन्न हुई, जिसने अनेक लोगों को अरबी सीखने के लिए प्रोत्साहित किया। समय के साथ-साथ अरब उपनिवेशी भी देशी भाषाएँ सीख गए, और भारतीय ज्ञान एवं दूरदर्शिता तथा भारतीय चिन्तन और दर्शन को अरबी भाषा में अनूदित करने लगे। वास्तव में उनके इस प्रकार के प्रयासों ने सम्पूर्ण अरब प्रायद्वीप में *'हिन्द'* को एक लोकप्रिय नाम बना दिया। परिणामस्वरूप अरब में माता-पिता अपनी बेटियों का नाम इस शब्द से रखने लगे।

वर्तमान समय में भारतीय नागरिकों के अरब जगत से सम्बन्ध ने भी इस प्रवृत्ति को गति दी है। परिणामस्वरूप अरबी साहित्य और इस्लामिक विज्ञानों की विभिन्न शाखाओं पर विचार करनेवाली विविध पुस्तकों और लेखों का विभिन्न भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुआ है। अरबी पुस्तकों एवं आलेखों के ऐसे अनूदित संस्करणों से ताहा हुसैन, नजीब महफुज और तौफीक अल-हाकर जैसे अरब लेखकों को भारत के साहित्यिक समाज में अत्यधिक लोकप्रियता हासिल हुई है। यहाँ ताहा हुसैन के 'फी-अल-शेर-जहाली' का विशेष रूप से उल्लेख किया जाना चाहिए, क्योंकि इसने भारत में अरबी जानने वाले लगभग प्रत्येक व्यक्ति का ध्यान आकर्षित किया। इसकी विषयवस्तु बहुत विवादास्पद थी। परिणामस्वरूप, भारत के अनेक अरबी विद्वानों ने इसका अनुवाद किया। उर्दू में इसका अनुवाद मुफ्ती रजा फरंगी माहली ने किया। उनका अनुवाद सरल और स्पष्ट है और इस तथ्य को प्रदर्शित करता है कि उनका अरबी एवं उर्दू दोनों ही भाषाओं पर पूर्ण अधिकार है। एक और आधुनिक अरबी लेखक, जिनके लेखन का भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुआ है, वह है मिस्र के प्रसिद्ध रचनाकार तौफीक-अल-हाकिम। उनके अनेक नाटक उर्दू व अन्य भारतीय भाषाओं में अनूदित हो चुके हैं, उनका प्रसिद्ध नाटक *'मोहम्मद'* का उर्दू अनुवाद बहुत पहले प्रोफेसर अतिया खलील अरब ने किया था। इस नाटक में पैगम्बर मुहम्मद के जीवन को प्रभावशाली ढंग से दर्शाया गया है। उनके अन्य नाटक—*सुलैरनान-अल-हाकिम शहरजाद* और *अहल-उल-कहाफ* भी उर्दू में अनूदित हो चुके हैं। इन तीनों में से *अहल-उल-कहाफ* ने पाठकों के मन पर दीर्घगामी प्रभाव डाला। इस नाटक की विशेषता है कि इसमें हमारे जीवन के सैद्धान्तिक और दार्शनिक पक्षों पर विचार किया गया है। इस नाटक के अनुवादक ने इस बात का विशेष ध्यान रखा, बहुत सरल, सहज, बोधगम्य और रोचक शैली में इसका अनुवाद किया। एक *यमनी* नाटक *'अल-रहिना'* का *'बन्धक'* शीर्षक से बहुत पहले हिन्दी में अनुवाद हुआ था। इस प्रकार की अकादेमिक गतिविधियों

ने भूमण्डलीकरण और सम्पर्क साधने वाले यन्त्रों के बढ़ते प्रयोग के कारण गति पाई है। अब, बहुराष्ट्रीय व्यापार कम्पनियों को अनुवादकों और दुभाषियों की अधिक आवश्यकता है क्योंकि वे अपने विदेशी प्रतिस्थानियों की भाषा को सीखे बिना अपना व्यापार नहीं चला सकते।

इस उद्देश्य के लिए कम्पनियाँ कभी स्थायी और कभी अस्थायी अनुवादकों व दुभाषियों की नियुक्ति करती हैं और उनकी शैक्षणिक योग्यताओं व अनुभवों के अनुसार उन्हें यथोचित धनराशि देती हैं। इस प्रवृत्ति ने व्यावसायिक अनुवादक की प्रथा को जन्म दिया। ये पेशेवर अनुवादक सामान्यतः कार्यालयी और तकनीकी कागजात का अनुवाद करते हैं। चूँकि ये दस्तावेज़ विशिष्ट शब्दावली से परिपूर्ण होते हैं जो सामान्यतः प्रयोग किए जाने वाले शब्दकोशों में नहीं मिलती, इसलिए विशिष्ट पारिभाषिक शब्दावलियों की बड़ी माँग हैं। विश्वविद्यालयों और कॉलेजों में अरबी कोर्स करने वाले छात्र-छात्राओं का उद्देश्य द्विभाषी अनुवादक बनना होता है। अपनी औपचारिक शिक्षा समाप्त करने के बाद वे विदेशी व्यापार में संलग्न वाणिज्यिक संस्थानों में कार्य करने को प्राथमिकता देते हैं। ऐसे अनुवादकों को प्रायः अरब देश विशेषकर दुबई व अन्य खाड़ी देशों में जाने का अवसर मिलता है जो वर्त्तमान समय में पूरे पश्चिमी एशियाई क्षेत्र में वाणिज्यिक गतिविधियों का केन्द्र माना जाता है। मध्य पूर्व के देशों में अपने प्रवास के दौरान वे बहुधा अरब लोगों के साहित्यिक व सामाजिक विकास से रू-ब-रू होते हैं। कभी-कभी किसी अरबी लघुकथा या गद्य से प्रभावित होने पर वे उसे अपनी सम्बन्धित भाषा में अनुवाद करते हैं।

ऐसे अनूदित कार्यों के द्वारा ही भारतीय साहित्यकार ये जान पाते हैं कि वर्त्तमान अरब लोग अपने पारम्परिक ज्ञान तक ही सीमित नहीं हैं। यदि ये अनूदित रचनाएँ नहीं होतीं तो पड़ोसी अरब देशों के बारे में हमारा ज्ञान बहुत सीमित और अल्प होता।

9.3 सारांश

उल्लिखित तथ्यों से हमें यह जानकारी मिलती है कि भारतीय विद्वानों की सदा से अरब जगत के साहित्यिक और वैज्ञानिक विकास में गहरी रुचि रही है। जब भी उन्हें आभास हुआ है कि किसी अरबी पाठ की भारतीय सन्दर्भ में प्रासंगिकता है तो वे उसे अपनी देशी भाषाओं में अनुवाद किया है और इस प्रकार उन्होंने भारत की साहित्यिक विरासत को समृद्ध किया है। यद्यपि यह कोई आसान उद्यम नहीं है, क्योंकि अरबी भाषा में दक्षता हासिल करना मुश्किल कार्य है। इसे सीखना कठिन है, इसकी वाक्य संरचना हमारी भारतीय भाषाओं की वाक्य संरचना से भिन्न है, इस बाधा के बावजूद हमारे कुछ भारतीय विद्वानों ने इसमें दक्षता हासिल की है और अरबी पाठों के अर्थों को सफलतापूर्वक कुछ भारतीय भाषाओं में रूपान्तरित किया है। इस प्रकार उन्होंने हमारे ज्ञान-फलक को विस्तृत किया है।

9.4 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. भारतीय भाषाओं में अनूदित कुछ धार्मिक ग्रन्थों के महत्त्व को रेखांकित कीजिए।
2. अरबी में लिखित और कुछ भारतीय भाषाओं में अनूदित ऐतिहासिक प्रलेखों पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
3. अरबी में लिखे और भारतीय भाषाओं में अनूदित अरबी यात्रा वृत्तान्तों की प्रासंगिकता का मूल्यांकन कीजिए।
4. अरबी से भारतीय भाषाओं में अनूदित व साहित्यिक पाठों के महत्त्व की व्याख्या कीजिए।

9.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

एक अरबी भाषा के पाठ को भारतीय भाषाओं में किस प्रकार अनूदित किया जाए, इस पर कोई खास पुस्तक नहीं है। हालाँकि अरबी भाषा सीखने और सिखाने वाली पुस्तकें इस सम्बन्ध में काफी उपयोगी हैं। निम्नलिखित सीखने-सिखाने वाली सामग्री भारतीय भाषाओं में अरबी पाठ के अनुवाद में अवश्य ही सहायक होगीं:

- सैयद अली/*अरैबिक फॉर बिगिनर्स*
- प्रो. एम. सलीम/*अरैबिक फॉर स्कॉलर्स*

- अब्दुल सत्तार/*अरबी का मुअल्लिम*
- अब्दुल मजीद अल-नकवी/*मुअल्लिम-उल इंशा*
- अब्दुर रहमान अमश्तसरी/*किताब-उन-नहवे*
- अब्दुर रहमान अमश्तसरी/*किताब-उस-सर्फ*
- हमीदुद्दीन फरही/*अस्बाक उन नहवे*
- हमीदुद्दीन फरही/*अस्बाक उस सर्फ*
- अली अल-जीम व मुस्तफा अमीन/*अल नहौ उल-वजीह*
- जॉन ए हेवुड/*ए न्यू अरैबिक ग्रामर ऑफ दि रिटन लैंग्वेज*

इकाई 10 फ़ारसी ग्रन्थों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 पृष्ठभूमि

10.3 फ़ारसी भाषा के दस्तावेज़ों का भारतीय भाषा में अनुवाद

10.4 सारांश

10.5 अभ्यास के लिए प्रश्न

10.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

10.0 उद्देश्य

यह इकाई फ़ारसी ग्रन्थों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद से सम्बन्धित है। इस इकाई को पढ़ने से अनुवाद अध्ययन में एम.ए. करने वाले शिक्षार्थियों को भारतीय भाषाओं में फ़ारसी ग्रन्थों के अनुवाद की संक्षिप्त जानकारी मिलेगी। इस इकाई का उद्देश्य शिक्षार्थियों को अनुवाद के क्षेत्र में फ़ारसी भाषा के योगदान की अहमियत से अवगत कराना है।

शिक्षा के इस उच्च स्तर पर आकर हम जानते हैं कि भारत में लगभग 800 वर्षों तक तुर्कों एवं इरानियों का शासन रहा, उस दौर के, और खास कर दिल्ली सल्तनत (सन् 1206) से *भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस* की स्थापना (सन् 1885) तक के समय के ऐसे लाखों दस्तावेज़ हैं, जिनके अनुवाद से आज भी भारतीय इतिहास को एक नया मोड़ मिल सकता है, किन्तु दुर्भाग्य की बात है कि फ़ारसी भाषा में लिखित विभिन्न दस्तावेज़ों का हमारे इतिहासकारों, शोधकर्ताओं ने बहुत कम उपयोग किया है। सन् 1206 से सन् 1885 तक के ऐतिहासिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आदि दस्तावेज़ों के अध्ययन-अनुशीलन से भारत की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को पूर्णतः समझा जा सकता है, परन्तु ये दस्तावेज़ मूलतः फ़ारसी भाषा में हैं, अनुवाद उपलब्ध नहीं होने की वजह से फ़ारसी नहीं जानने वालों के लिए आज भी ये अबूझ ही बने हुए हैं। आज इस बात की बड़ी जरूरत है कि शोधकर्ता, इतिहासकार, बुद्धिजीवी वर्ग मिलकर भारतीय उपमहाद्वीप के अभिलेखागारों में दयनीय स्थिति में पड़े फ़ारसी भाषा के इन दस्तावेजों को पढ़े, समझें ताकि भारतीय इतिहास का दूसरा पहलू भी सामने आ सके। भारत के पहले स्वाधीनता संग्राम, जिसे सन् 1857 का गदर, या सिपाही विद्रोह भी कहते हैं, के बारे में आज की पीढ़ी जो कुछ भी जानती है उसका स्रोत अंग्रेजी भाषा के दस्तावेज़ हैं, क्योंकि फ़ारसी में लिखे प्राथमिक स्रोत के दस्तावेजों की उतनी प्राथमिकता हमारे इतिहासकारों ने नहीं दी, जितनी अंग्रेजी, हिन्दी, बंगला, उर्दू एवं अन्य भाषाओं को दी। राज-काज की भाषा होने की वजह से उस दौरान फ़ारसी की अहमियत को नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता। इकाई का मुख्य उद्देश्य शिक्षार्थियों को सन् 1206-1857 तक के भारतीय इतिहास के प्राथमिक स्रोत (फ़ारसी भाषा) की अहमियत से अवगत कराने और फ़ारसी से भारतीय भाषाओं में हुए अनुवादों की जानकारी देने की एक कोशिश है।

10.1 प्रस्तावना

भारत एवं ईरान के सम्बन्धों की कड़ी नवपाषाण काल से पहले ही प्रारम्भ होती है। जब ईरान में अकेमेनियम काल था, इधर भारत में मौर्य काल था। हमने पिछली इकाई में भी पढ़ा कि भारत-ईरान के सम्बन्ध अति प्राचीन काल के हैं। वर्तमान काल में भी इन दो राष्ट्रों के सम्बन्ध मधुर हैं। हमने पिछली इकाई में पढ़ा कि फ़ारसी भाषा में

सन् 1206-1857 तक विभिन्न भारतीय भाषाओं से अनगिनत दस्तावेजों का अनुवाद हुआ। दिल्ली सल्तनत से लेकर मुगल सम्राज्य के विघटन तक शासकों एवं राजाओं ने हिन्दी, संस्कृत एवं अन्य भारतीय भाषाओं में लिखित धर्म, साहित्य, संगीत, चिकित्सा पद्धति, भूगोल एवं गणित इत्यादि के पाठों का फ़ारसी भाषा में अनुवाद कराया। परन्तु इसका दूसरा पहलू अत्यन्त दुखदायी एवं दुर्भाग्यपूर्ण है। फ़ारसी में उपलब्ध सन् 1206-1857 तक के काल के ऐतिहासिक, आर्थिक एवं प्रशासनिक दस्तावेजों एवं धार्मिक, साहित्यिक रचनाओं का अनुवाद भारतीय भाषाओं में नगण्य है। एक अनुमान के अनुसार केवल बारह प्रतिशत फ़ारसी स्रोतों का अनुवाद भारतीय भाषाओं में हुआ है। इन बारह प्रतिशत में वे दस्तावेज़ भी हैं जिनका अनुवाद अंग्रेजी से, हिन्दी या अन्य भारतीय भाषाओं में हुआ है।

ईरानियों के भारत आगमन से लेकर सन् 1857 के गदर तक लगभग हर वंश के राजाओं, शासकों एवं बुद्धिजीवी वर्गों ने यहाँ के तात्कालिक इतिहास, अर्थव्यवस्था, समाज, नीतिशास्त्र, प्रशासन, राजनीति, धर्म, कला एवं संस्कृति पर कई किताबें, कहानियाँ, मस्नवीं, रुबाई, ग़ज़लें इत्यादि फ़ारसी भाषा में लिखी गईं, जिनके अध्ययन के पश्चात ही हम भारत के मध्यकालीन इतिहास को भली-भाँति समझ सकते हैं। इतिहासकारों की एक मान्यता के अनुसार सन् 1857 ग़दर के दौरान बहुत सारे फ़ारसी दस्तावेजों को जान-बूझकर नष्ट कर दिया गया, परन्तु आज भी पन्द्रह-बीस लाख दस्तावेज़ सम्पूर्ण भारत में सदियों से दो डिग्री सेल्सियस से अड़तालीस डिग्री सेल्सियस के तापमान झेल रहे हैं, उनका अध्ययन तो दूर की बात है, वैसा संरक्षण तक नहीं हुआ, जैसा होना चाहिए। इनके अनुवाद एवं संरक्षण न होने के कई कारण हो सकते हैं, यह एक शोध का विषय है। पर एक आम पढ़ा-लिखा इन्सान क्या सोच सकता है? इन बहुमूल्य एवं राष्ट्रीय सम्पति को इस तरह नज़रअन्दाज किए जाने का क्या मतलब हो सकता है? भारत की आजादी के छह दशक से ज्यादा समय गुजर जाने के बाद आज भी यह कार्य प्राथमिक और महत्त्वपूर्ण नहीं माना जा रहा है, यह चिन्ता का विषय है। केवल राष्ट्रीय अभिलेखागर, दिल्ली एक ऐसी संस्था है, जहाँ फ़ारसी के दस्तावेज़ भली-भाँति संरक्षित हैं। इसके अलावा खुदाबख़्श ओरिएण्टल लाइब्रेरी, पटना एवं रामपुर रज़ा लाइब्रेरी, रामपुर ने भी इनके संरक्षण हेतु दूरगामी कदम उठाए हैं। पर इसके अलावा दर्जन भर से भी अधिक ऐसी राष्ट्रीय एवं प्रान्तीय संस्थाएँ हैं, जहाँ फ़ारसी के नायाब स्रोत बहुत ही दयनीय दशा में हैं, जिनमें नमी आ जाने के कारण विघटन हो रहा है।

आज इस बात की जरूरत है कि राष्ट्रीय नीतियों में बदलाव लाया जाए और सदियों पुराने ऐसे दस्तावेजों के संरक्षण की दिशा में कार्य हो, इससे पढ़े-लिखे लोगों को रोजगार मिलने के साथ-साथ राष्ट्रीय सम्पदा की देख-रेख भी होगी और आने वाली पीढ़ियाँ इस पर गर्व कर सकेंगी।

10.2 पृष्ठभूमि

तेरहवीं शताब्दी के अन्तिम काल से ऐतिहासिक रचनाओं का कार्य शुरू हुआ, यह दिल्ली सल्तनत का ही काल था। लिखित रूप में ऐतिहासिक एवं अन्य महत्त्वपूर्ण घटनाओं का वर्णन इसी दौरान प्रारम्भ हुआ, जिसे बाद में हिस्ट्रीयोग्राफी नाम दिया गया। भारतवर्ष में इस समय इतिहास के अध्येताओं के लिए *'मध्यकालीन भारत का इतिहास'* पढ़ने हेतु इण्डो-पर्शियन हिस्ट्रीयोग्राफी की एक इकाई का अध्ययन करना अनिवार्य है, इस कारण अध्येताओं को कई विश्वविद्यालयों में छह माह से एक साल तक का फ़ारसी अध्ययन भी कराया जाता है, किन्तु सचाई है कि उन ऐतिहासिक दस्तावेज़ों को पढ़ने-समझने के लिए साल-छह महीने का फ़ारसी भाषा का ज्ञान पर्याप्त नहीं है।

गज़नवी काल में (गजनन्द 977-1186-90) जब मुस्लिम सेना भारत के उत्तरी भाग में आने लगी तो साथ-साथ कवि, लेखक एवं बुद्धिजीवियों का भी भारत में आगममन हुआ, उस समय फ़ारसी भाषा का ज्ञान होना रोज़गार के अवसर को चार-चाँद लगना था और सामाजिक प्रतिष्ठा को बल देता था। इस काल में बहुत से दीवान, तज़केरा, नसीहत, मसनवी, नैतिक ग्रन्थ, यात्रावृत्त, प्रशासन सम्बन्धी दस्तावेज़ लिखे गए, जो पूर्णतः फ़ारसी भाषा में था, उनके न्यूनतम हिस्से का हिन्दी या अन्य भारतीय भाषा में अनुवाद हुआ। कुतुबुद्दीन ऐबक से लेकर बहादुर शाह ज़फ़र तक (इल्तुतमिश, आरामशाह, रज़िया सुल्ताना, बलबन, जलालुद्दीन खिलजी, अलाउद्दीन खिलजी, फिरोजशाह तुगलक, मोहम्मद बिन तुगलक, बहलोल लोदी, सिकन्दर लोदी, इब्राहिम लोदी, ज़हिरुद्दीन मुहम्मद बाबर, हुमायूँ,

शेरशाह सूरी, जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ, औरंगजेब, बहादुरशाह प्रथम, फारुखसियार एवं बहादुरशाह ज़फर) के कालों की गतिविधियों एवं संरचनाओं को समझने के लिए इनके कालों में लिखे गए विभिन्न दस्तावेज़ों का अध्ययन अति-आवश्यक है जिनमें अधिकतर फ़ारसी भाषा में है।

अमीर खुसरो, मिर्जागालिब, अल्लामा इकबाल, सर सैयद अहमद खान की कुछ फ़ारसी रचनाओं का अनुवाद उर्दू एवं हिन्दी भाषाओं में हुआ है, जिसका वर्णन आगे है।

10.3 फ़ारसी भाषा के दस्तावेज़ों का भारतीय भाषा में अनुवाद

अमीर खुसरो के अधिकांश साहित्यिक कार्य फ़ारसी में हैं। उनकी कुछ ही साहित्यिक रचनाएँ उर्दू भाषा में भी हैं, पर उस उर्दू भाषा में भी फ़ारसी के शब्द भरे पड़े हैं। जिसे एक आम उर्दू जानने वाला नहीं समझ सकता। अब जब अमीर खुसरो की फ़ारसी रचनाओं की यह स्थिति है, तो औरों की बात क्या हो? उनकी तमाम रचनाओं के हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद की बड़ी जरूरत है। अमीर खुसरो की निम्नलिखित रचनाओं का अनुवाद भारतीय भाषाओं में हो सकता है : *गुर्रतुल कमल, बक़िया नक़िया, क़िस्सा चार दरवेश, क़िरान-अस-सादीन, मिफ्तहुल फतह, नोह सेपहर, तुग़लकनामा, खाम्से निज़ामी (हश्त बहिश्त, मतलाउल अनवर, शीरीं-खुसरु, मजनूं लैला, और आइना इस्कन्द्री)।* कुछ ऐसे शोधकर्ता जिनका सम्बन्ध उर्दू भाषा से है, निश्चय ही इनमें से कुछ का अनुवाद अंशतः अपने शोध-कार्य के दौरान कर लिया होगा, फिर भी बड़े पैमाने पर अन्य भारतीय भाषाओं में इसका अनुवाद करने की जरूरत है।

मुगल साम्राज्य के अन्तिम चरण के सुविख्यात शायर मिर्जा असदुल्लाह खान गालिब ने फ़ारसी में कई पत्र लिखे। गालिब के पत्रों एवं अन्य साहित्यिक रचनाओं की अहमियत का एहसास उस वक्त हुआ जब सन् 1857 का सिपाही विद्रोह शुरू हुआ। फ़ारसी में लिखी गालिब की अति प्रसिद्ध किताब *'दस्तम्बू'* उस विद्रोह की दास्तान है। उसके उर्दू एवं अंग्रेजी अनुवाद ने सन् 1857 के गदर की समझ को नया आयाम दिया। जब गदर अपने चरम पर था, तब गालिब ने अपने मित्रों, सगे सम्बन्धियों को खत के जरिए दिल्ली की बदहाली का जिक्र किया करते थे। गालिब के फ़ारसी पत्रों के उर्दू एवं अंग्रेजी अनुवाद ने शोध कार्य की दिशा बदल दी, सन् 1857 के गदर की वास्तविक छवि अंकित करने में उन पत्रों का विशिष्ट योगदान रहा। अल्लामा इकबाल की अधिकांशतः रचनाएँ फ़ारसी में हैं, जिनका अनुवाद उर्दू में हुआ। फ़ारसी में लिखी उनकी किताबें हैं–'असरार-ए-खुदी', 'रुमुज-ए-बेखुदी', 'पयाम-ए-मशरीक', 'ज़बर-ए-आज़म', 'बन्दागिनामा', 'जावेदनामा'। इन पुस्तकों का अनुवाद उर्दू में हुआ। अल्लामा इकबाल की ज्यादातर रचनाएँ फ़ारसी में दर्शन, नैतिकता, सूफी, आदर्श समुदाय एवं आदर्श शहर/देश, तथा रहस्यमय चित्रण पर आधारित है, इन कृतियों के विषय-प्रबन्ध एवं चिन्तन फलक इकबाल को विश्वव्यापी छवि प्रदान करते हैं।

मुगल साम्राज्य के विघटन के पहले एवं बाद, फ़ारसी में लिखी गईं रचनाओं की संक्षिप्त चर्चा के बाद, उल्लेखनीय है कि इसके अलावा विभिन्न वंशों के शासन-काल में भी फ़ारसी में रचनाएँ हुईं, जिनके बारे में हमें जानना चाहिए, भारतीय भाषाओं में जिनके अनुवाद होने चाहिए। ऐतिहासिक, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, प्रशासनिक प्रसंगों के दस्तावेजों के भी भारतीय भाषाओं में अनुवाद होने चाहिए, ताकि भारतवर्ष के गौरवशाली अतीत को और बेहतर, निष्पक्ष एवं तर्कसम्भव तरीके से समझा जा सके।

मिनहाज सिराज ने फ़ारसी भाषा में बंगाल के इतिहास पर *तबकाते नासीरी* शीर्षक से सुप्रसिद्ध किताब लिखी, जिसमें बख्तियार खिलजी के बंगाल आक्रमण से सन् 1259 तक की ऐतिहासिक गतिविधियों का वर्णन है। इस किताब का अनुवाद उर्दू में हुआ, फिर इसका अनुवाद अंग्रेजी में भी हुआ। सन् 1357 में जियाउद्दीन बरनी ने एक ऐतिहासिक किताब *तारीखे फिरोजशाही* लिखी, जिसमें दिल्ली सल्तनत से फिरोजशाह तुगलक तक की ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन है। उर्दू एवं अंग्रेजी में इस किताब का भी अनुवाद हो चुका है। इसके अलावा जियाउद्दीन बरनी ने फ़ारसी भाषा में *फतवाए जहानदारी* शीर्षक से पुस्तक लिखी, जिसमें मुस्लिम शासन के राजनीतिक विचारों का वर्णन है, जिसका अनुवाद उर्दू में हुआ है। इनके अलावा भी कई किताबें हैं, जिनका अनुवाद अभी तक भारतीय भाषाओं में नहीं हुआ है; *सना-ए-मोहम्मदी, सलवत-ए-कबीर, हसरतनामा, इनायतनामा* आदि

उनमें प्रमुख हैं, जिनका अनुवाद इतिहास एवं संस्कृति के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान दे सकता है। *शाहनामा* शीर्षक की उत्कृष्ट कृति फिरदौसी ने महमूद गजनवी के काल में लिखा था, विश्व-प्रसिद्ध कृतियों में शुमार होनेवाली इस पुस्तक का अनुवाद भारतीय भाषाओं में होना चाहिए, निश्चय ही वह अनुवाद भारतीय साहित्य की उपलब्धि साबित होगा, और भारत-इरान सम्बन्धों के वर्तमान सन्दर्भों को मजबूती प्रदान करेगा। शेख सादी ने सन् 1257 में *बुस्ताँ* तथा सन् 1258 में *गुलिस्ताँ* शीर्षक से दो किताबें लिखीं, जिन्हें विश्व-ख्याति मिली। *बुस्ताँ* तथा *गुलिस्ताँ* का अनुवाद फ़ारसी से उर्दू में हुआ पर इसके अलावा अन्य भारतीय भाषाओं में इसका अनुवाद सम्भव नहीं हुआ है। उमर खय्याम की *रुबाइयात* का अनुवाद सबसे पहले एडवर्ड फिट्जराल्ड ने अंग्रेजी में किया, जिसका पहला संस्करण सन् 1859 में प्रकाशित हुआ, सन् 1889 तक में इसके पाँच संस्करण हुए। पाँचवाँ संस्करण अनुवादक की मृत्यु के बाद छपा और समकालीन समालोचकों ने उसका नाम *द रुबाइयत ऑफ फिट्जउमर* रखा।

इसके अलावा विश्व की लगभग सभी प्रमुख भाषाओं में उमर खय्याम की रुबाइयों के अनुवाद हो चुके हैं। जर्मन, रशियन, अफ्रिकन, इटेलियन, डच, थाइ, अल्बेनियन इनमें प्रमुख भाषाएँ हैं।

उन रुबाइयों का अनुवाद अनेक भारतीय भाषाओं में भी हुआ। बांग्लादेश के राष्ट्र कवि काजी नजरुल इस्लाम ने सन् 1958 में उन रुबाइयों का बंगला में अनुवाद किया। उल्लेखनीय है कि जिस तरह नजरुल की गेय रचनाएँ *नजरुल-गीतिका* नाम से, रवीन्द्रनाथ टैगोर की रचनाएँ *रवीन्द्र-संगीत* नाम से गाई जाती हैं, उसी तरह नजरुल ने उमर खय्याम की रुबाइयों को *ओमर खैय्याम गीति* शीर्षक से रखा। सन् 1942 में मुहम्मद शहीदुल्लाह ने बंगला में इसका अनुवाद *रुबाइयत-ए-ओमार खैय्याम* शीर्षक से किया। जफर सिकन्दर अबू ने सन् 1966 में इसका बंगला अनुवाद *ओमार खैय्याम* शीर्षक से किया। इस तरह बंगला में इसके अनेक अनुवाद हुए जिनमें कान्ति घोष, नरेन्द्र देव और शक्ति चट्टोपाध्याय के नाम प्रमुख हैं।

प्रसिद्ध पुस्तक *एक योगी की आत्मकथा* के लेखक परमहंस योगानन्द ने अपनी *वाइन ऑफ द मिस्टिक* शीर्षक पुस्तक में खय्याम की रुबाइयों के आध्यात्मिक पक्ष को समझाया है। लगभग छह दशक पहले लिखी गई वह पुस्तक इधर आकर *रुबाइयत ऑफ उमर खय्याम एक्स्प्लेण्ड* शीर्षक से फिर प्रकाशित हुई है।

पण्डित नारायन दास (पूरा नाम *पण्डित अज्जदा अदिभतला नारायन दास*) हिन्दी, तेलुगु, संस्कृत, फ़ारसी समेत नौ भाषाओं के ज्ञाता थे। वे उमर खय्याम के बहुत बड़े प्रशंसक थे। उनका मत था कि फिट्जराल्ड के अनुवाद में उमर की रुबाइयों के साथ पूरा न्याय नहीं हुआ है, इसे प्रमाणित करने के लिए उन्होंने संस्कृत और तेलुगु में उन रुबाइयों का अनुवाद किया। सन् 1932 में प्रकाशित यह अनुवाद उस समय का बहुत बड़ा साहित्यिक योगदान माना गया।

अन्य भाषाओं की तरह हिन्दी में भी रुबाइयों के कई अनुवाद हुए। कुछ अनुवाद तो हिन्दी के सुविख्यात कवि हरिवंश राय बच्चन की प्रसिद्ध कृति *मधुशाला(सन् 1935)* के प्रकाशन से पहले के हैं और कुछ बाद के भी। कहते हैं कि *मधुशाला* की रचना का प्रेरणा-स्रोत उमर खय्याम की रुबाइयाँ ही है। चर्चा है कि इन रुबाइयों का हिन्दी में पहला अनुवाद सम्भवतः पण्डित सूर्यनाथ तकरू ने किया। पण्डित गिरिधर शर्मा नवरत्न ने इन रुबाइयों का हिन्दी अनुवाद सन् 1931 में किया, जो नवरत्न-सरस्वती भवन, झालरापाटन से प्रकाशित हुआ। सन् 1933 में उन्होंने संस्कृत अनुवाद भी किया, संस्कृत संस्करण का प्रकाशन उसी वर्ष हुआ।

सन् 1931 में उमर खय्याम की रुबाइयों का अनुवाद राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने किया, कानपुर के प्रकाश पुस्तकालय द्वारा *रुबाइयात उमर खय्याम* शीर्षक से वह पुस्तक प्रकाशित हुई। फिलहाल यह पुस्तक अनुपलब्ध है।

सन् 1932 के आसपास पण्डित केशव प्रसाद पाठक द्वारा किया गया हिन्दी अनुवाद इण्डियन प्रेस लिमिटेड, जबलपुर से प्रकाशित हुआ। सन् 1932 में ही पण्डित बलदेव प्रसाद मिश्र द्वारा किया गया अनुवाद मेहता पब्लिशिंग हाउस, सूत टोला, काशी से प्रकाशित हुआ, डॉ. गया प्रसाद गुप्त द्वारा किया गया अनुवाद सन् 1933 में हिन्दी साहित्य भण्डार, पटना से प्रकाशित हुआ।

इसके अलावा मुंशी इकबाल वर्मा 'सेहर' ने भी इन रुबाइयों का अनुवाद मूल फ़ारसी से किया, जो इण्डियन प्रेस, प्रयाग से प्रकाशित हुआ। लखनऊ के पण्डित ब्रजमोहन तिवारी द्वारा किए गए अनुवाद कुछ पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए। सन् 1940 में अल्मोड़ा के तारा दत्त पाण्डेय ने इन रुबाइयों का अनुवाद कुमाऊँनी में किया, बाद के दिनों में चारु चन्द्र पाण्डे ने इसका अनुवाद कुमाऊँनी से हिन्दी में किया। सन् 1938 में किताबिस्तान, प्रयाग से रघुवंश लाल गुप्त का अनुवाद प्रकाशित हुआ, सन् 1939 में जोधपुर के किशोरीरमण टण्डन ने भी इसका अनुवाद किया। पण्डित जगदम्बा प्रसाद 'हितैषी' ने लम्बे समय तक *रुबाइयात उमर खय्याम* पर काम कर एक पुस्तक लिखी, उस पुस्तक का नाम सम्भवतः *मधुमन्दिर* है। सन् 1948 में भारती भण्डार, प्रयाग से *मधुज्वाल* शीर्षक से सुमित्रानन्दन पन्त का अनुवाद प्रकाशित हुआ।

मुगलकाल में गुप्तचर विभाग की सूचनाओं का आदान-प्रदान फ़ारसी भाषा में ही हुआ करता था। स्थानीय, क्षेत्रीय, प्रान्तीय, राष्ट्रीय, एवं अन्तर्राष्ट्रीय सूचनाएँ; युद्ध, युद्धभूमि एवं शत्रुओं की जानकारी आदि फ़ारसी में ही होती थी। मुगल शासकों से लेकर शिवाजी तक के भारत के विस्तृत घटकों की जानकारी से भरे असंख्य पत्र में किसी-न-किसी स्थिति में आज भी उपलब्ध हैं, उन पत्रों/दस्तावेजों के पूरी तरह नष्ट होने से पहले उनकी संरक्षा की आज अत्यधिक आवश्यक है, उसके अनुवाद एवं संरक्षण की भरपूर चेष्टा की जानी चाहिए। ये दस्तावेज़ निश्चय ही शोध के क्षेत्र में मील के पत्थर साबित हो सकेंगे।

ऐसी परिस्थिति में आज के इतिहासवेत्ताओं और बुद्धिजीवियों का दायित्व बनता है कि वे इन उपयोगी दस्तावेजों के संरक्षण एवं विभिन्न भारतीय भाषाओं में अनुवाद की दिशा में सक्रिय भूमिका देने हेतु उत्सुक शोधकर्त्ताओं को राष्ट्रहित में प्रोत्साहित और प्रेरित करें। आज इस बात की जरूरत है कि भारत के सभी विश्वविद्यालयों में अभिलेख संग्रह केन्द्र की स्थापना हो, जहाँ राष्ट्रहित के ऐतिहासिक दस्तावेजों के संरक्षण एवं बहुभाषी अनुवाद की व्यवस्था हो।

अबुलफजल ने *अकबरनामा* एवं *आइना-ए-अकबरी* शीर्षक से दो ऐतिहासिक पुस्तकें फ़ारसी भाषा में लिखीं। *आइना-ए-अकबरी* तीन जिल्दों में है। इन दोनों पुस्तकों का अनुवाद अंग्रेजी में उपलब्ध है, पर विभिन्न भारतीय भाषाओं में इसका अनुवाद होना बाकी है। ऐसी अनेक कृतियाँ/अभिलेख भारत के विभिन्न अभिलेखागारों में पड़े हैं, जिनका अब तक नामांकन, वर्गीकरण तक नहीं हुआ है। भारत में सन् 1206 से 1857 के बीच निर्मित ऐतिहासिक इमारतों/स्मारकों पर खचित कलात्मक सुलेख अधिकांशतः फ़ारसी भाषा में हैं, भारतीय भाषाओं में उनके अनुवाद नहीं होने की वजह से हम उस विशेष स्मारक के बारे में जानकारी हासिल करने से वंचित हो जाते हैं। जरूरी नहीं कि ये इमारत/स्मारक दिल्ली, या गोलकुण्डा, या मैसूर का किला हो, पूरे भारतवर्ष में जितने भी ऐतिहासिक स्मारक हैं, सब पर खुदे अभिलेख महत्त्वपूर्ण हैं। अपने अतीत को भली-भाँति जानने हेतु इन इमारतों पर लिखी खुशनवीसी का अनुवाद बहुत जरूरी है। 'भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण' की ओर से इन सब के संरक्षण की दिशा में काम हो रहा है, पर यह अधूरा न रहे, हमें इसके लिए चिन्तनशील रहना होगा।

पत्रकारिता किसी भी सामाजिक एवं राजनीतिक पहलुओं पर दूरगामी प्रभावी डालती है। मुगलों के भारत-आगमन के बाद पत्रकारिता का एक सुनहरा युग शुरू हुआ, फ़ारसी के उस दौर के अनेक अखबारों में प्रकाशित जिन आलेखों में सन् 1857 के विद्रोह से सम्बन्धित जानकारी है, वे हमारे वर्तमान शोध एवं ज्ञानाकुल मानस को नई दिशा दे सकते हैं। दुखद है कि ढेर सारे बहुमूल्य समाचार-पत्र अभिलेखागारों, संग्रहालयों एवं पुस्तकालयों में दयनीय स्थिति में हैं, या कहें कि नष्टप्राय हैं, उनका अनुवाद और संरक्षण जरूरी है, कुछ प्रमुख समाचार-पत्र निम्नलिखित है :

मिरात-उल-अखबार, आइना-ए-इस्कौदी, जाम-ए-जहाँनुमा, शमसुल अखबार, बंगाल हेराल्ड, स्वराज इन्दिरा, आगरा अखबार, ज़ब्दातुल अखबार, माह-ए-आलम अफरोज, लाहौर अखबार, लुधियाना अखबार, सुल्तान-उल-अखबार, मेहर मुनेर, अखबार-उल-कबीर, सेरेजुल अखबार, सादिक-अल-अखबार, एहसान-उल-अखबार, मारताउद अखबार, जगदीपक भास्कर, गुलशन-ए-नौ-बाहर, दूरबीन, उम्दातुल अखबार (मुम्बई और सूरत), अंजुमन-ए-पेशावर, शफीक, मुदारिस-ए-फ़ारसी, फ़ारसी अखबार, नग्मा-ए-हिन्द, आजाद, सैयद-उल-अखबार, कैद-ए-फ़ारसी, इस्लाह, ईरान-ए-नौ, जहान-ए-आजाद, ताजमहल, आहंग, और ईरान-व-हिन्द।

इन समाचार-पत्रों एवं पत्रिकाओं के अनुवाद से हमारे देश की आर्थिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, सैनिक एवं राजनीतिक घटनाओं के प्रतिज्ञान में बड़ी उपलब्धि होगी, इन प्राथमिक स्रोतों से हम एक निष्पक्ष शोधकार्य को दिशा दे सकते हैं।

पलासी युद्ध (सन् 1757) से भारत के पहले स्वाधीनता संग्राम (सन् 1857) तक के एक सौ वर्षों की ऐतिहासिक, राजनीतिक, आर्थिक, सैनिक, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक उपलब्धियों का ब्यौरा जिन दस्तावेज़ों में सुरक्षित है, वे यद्यपि दयनीय दशा में हैं, पर इनके संरक्षण एवं अनुवाद से हम इन सौ वर्षों के हर पहलू को बेहतर समझ सकते हैं। भारत के निम्नलिखित अभिलेखागारों एवं संग्रहालयों में ये दस्तावेज उपलब्ध हैं:

1. राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली
2. राष्ट्रीय अभिलेखागार, भोपाल
3. उत्तर प्रदेश राज्य अभिलेखागार, लखनऊ
4. उत्तर प्रदेश राज्य अभिलेखागार, इलाहाबाद
5. बिहार राज्य अभिलेखागार, पटना
6 मध्य प्रदेश राज्य अभिलेखागार, भोपाल
7. पंजाब राज्य अभिलेखागार, पटियाला
8. हरियाणा राज्य अभिलेखागार, चण्डीगढ़
9. राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर
10. राष्ट्रीय पुस्तकालय, कोलकाता
11. जाकिर हुसैन पुस्तकालय, नई दिल्ली
12. सालारजंग संग्रहालय, हैदराबाद
13. दिल्ली राज्य अभिलेखागार, दिल्ली
14. आयुक्त कार्यालय, मेहरौली, दिल्ली
15. ख्वाजा हसन निजाम संग्रहालय, दिल्ली।
16. माल खानों के जिला मुख्यालयों—

    अलीगढ़, इटावा, आगरा, बिजनौर, मुरादाबाद, मेरठ, लखनऊ, बुलन्दशहर, एटा, मथुरा, बाराबंकी, सुल्तानपुर, आजमगढ़, बरेली, फर्रूखाबाद, झाँसी, गाजीपुर, मिर्जापुर, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, पटना, भागलपुर, कोलकता, इलाहाबाद, पानीपत, मेवात, सोनीपत, रोहतक, फरीदाबाद आदि।

17. खुदाबख्श ओरिएण्टल पुस्तकालय, पटना।

10.4 सारांश

सन् 1857 के सिपाही विद्रोह के स्वर्णिम भारतीय इतिहास ने ब्रिटिश शासन की नींव हिला दी थी, और उसके ठीक 90 साल बाद भारत को स्वाधीनता मिली। अपनी विरासतीय संघर्षगाथा के रूप में सन् 1857 की हर घटना भारत के शोधकर्ताओं, इतिहासकारों, फिल्म निर्माताओं का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करती है, हर भारतीय को उन

घटना-सूत्रों की जानकारी से सम्पन्न होना जरूरी लगता है। अंग्रेजी भाषा के उपनिवेशवादी सोच से प्रेरित और कल्पित पाठ द्वारा उन घटनाओं की अर्जित जानकारी वाली हमारी आज की पीढ़ी निश्चय ही इस महान घटना को तार्किक एवं तुलनात्मक सन्दर्भ में समझने की इच्छा करेगी। यदि फ़ारसी में उपलब्ध इन दस्तावेजों का अविकल अनुवाद प्राप्त हो तो अध्ययन-अनुशीलन बेहतर और प्रमाणिक हो सकेगा। इन प्राथमिक स्रोतों की अनदेखी शोधकार्य हेतु घातक होगी और एक विद्याहीन शैली विकसित होगी, जिससे बचना हर शोधकर्ता का शैक्षिक दायित्व है।

उक्त अधिकांश संग्रहालयों, पुस्तकालयों एवं अभिलेखागारों में दस्तावेजों के अनुकूलित रखरखाव तक की व्यवस्था नहीं है, सदियों पुराने इन फ़ारसी दस्तावेजों के संरक्षण/वर्गीकरण; धूप, बरसात, ठण्ड के मौसम में उनकी सुरक्षा की समुचित व्यवस्था के अभाव में इनका विघटन शुरू हो गया है। यदि शीघ्र कोई सही पहल नहीं हुई तो वह दिन दूर नहीं जब राष्ट्रीय सम्पत्ति के प्रतिमान ये सारे दस्तावेज़ नष्ट हो जाएँगे और भारत का मध्यकालीन इतिहास एक बार फिर प्राथमिक स्रोतों की कमी की वजह से इतिहास के अन्धेरे में गुम हो जाएगा।

निष्कर्ष यही है कि हम सभी पाठक, शिक्षार्थी, इतिहासवेत्ता, लेखक, बुद्धजीवी, पत्रकार, नीति निर्माता इस विषय पर गम्भीरता से सोचें कि आजादी के दशकों बाद ही सही, हम इन नायाब दस्तावेजों के संरक्षण/वर्गीकरण की दिशा में अग्रसर होएँ। क्या हम सब की यह नैतिक जिम्मेदारी नहीं बनती की इन प्राथमिक स्रोतों के उपयोग से ऐतिहासिक दृष्टिकोण को पुख्ता कर शोधकार्य को नई दिशा दें। हम अपने नीति निर्माताओं को इनके राष्ट्रीय महत्त्व की जानकारी दें।

इस जागरूकता अभियान से निश्चय ही मध्यकालीन भारत की अपनी भव्य विरासत, ऐतिहासिक सौष्ठव, सांस्कृतिक प्रासंगिकता की अहमियत को समाज का हर वर्ग समझ सकेगा। भविष्य में कोई धोखा से भी यह कहने का दुस्साहस नहीं करेगा कि इस भारतीय को भारत की समझ नहीं है।

10.5 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. सल्तनत काल की विभिन्न फ़ारसी किताबों/दस्तावेजों की एक सूची बनाएँ।
2. फ़ारसी भाषा में मुगल काल में हुए साहित्यिक कार्यों का वर्गीकरण करें।
3. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखें :

   तबकाते नासीरी

   तारीखे फिरोजशाही

   शाहनामा
4. ऐतिहासिक दस्तावेजों के संरक्षण/वर्गीकरण के सन्दर्भ में अपनी राय दें।
5. अपने निकटतम पुस्तकालय, संग्रहालय एवं अभिलेखागार में जाकर ऐतिहासिक दस्तावेजों की स्थिति का एक सर्वेक्षण करें।

10.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- नगेन्द्र, (सं.), *अनुवाद विज्ञान,* हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली, दिल्ली विश्वविद्यालय।
- तिवारी, भोलानाथ, *अनुवाद विज्ञान,* दिल्ली, शब्दकार।
- सैयद अली/*अरैबिक फॉर बिगिनर्स*

- प्रो. एम. सलीम/*अरैबिक फॉर स्कॉलर्स*
- अब्दुल सत्तार/*अरबी का मुअल्लिम*
- अब्दुल मजीद अल-नकवी/*मुअल्लिम-उल इंशा*
- अब्दुर रहमान अमश्तसरी/*किताब-उन-नहवे*
- अब्दुर रहमान अमश्तसरी/*किताब-उस-सर्फ*
- हमीदुद्दीन फरही/*अस्बाक उन नहवे*
- हमीदुद्दीन फरही/*अस्बाक उस सर्फ*
- अली अल-जीम व मुस्तफा अमीन/*अल नहौ उल-वजीह*
- जॉन ए हेवुड/*ए न्यू अरैबिक ग्रामर ऑफ दि रिटन लैंग्वेज*
- J.C. Catford, *Linguistic Theory of Translation.*
- George Steiner, *After Babel: Aspects of Language & Translation*, OUP, New York & London, 1975.
- Hardwick, Lorna, and St. Jerome, *Translating Words, Translating Culture*, Pub. Co. 2000.